उजाला

ईमाम अहमद रज़ा का परिचय

-: लेखक :-

प्रो. डा. मो. मसऊद अहमद

एम्. ए., पी. एच्. डी.

GIFT TO YOU
From : ADARA AFKAR-E-HAQUE
BAISEE BAZAR,
PURNEA Pin No. 854 515. (BIHAR)

- प्रकाशक -

एदारा अफकारे हक़

बायसी बाज़ार - पुर्णयॉ बिहार

रज़ा अकाडमी, नायगांव, नांन्देर (एम्. एस्.)

जानती जबकि दावा यह है कि वेद इल्हामी किताब (Revealed Book) है (मुहम्मद रियाज़ुल रहीम, चन्दन की ख़ुशबू वाले, कराची में छपी, 1995, पेज 2-3)। वैदिक धर्म की किताबों में क़ुर्बानी का भी ज़िक्र मिलता है। हालांकि मौजूदा दौर के हिन्दू गाय की क़ुर्बानी के सख़्त ख़िलाफ़ हैं। ऋग्वेद में लिखा है :

"फिर क़ुर्बानियों के समय किसकी इबादत करें और किसके भजन गाएं, उसी के जो रब्बे ला-ज़वाल है।" (पेज 51)

इससे मालूम होता है वैदिक धर्म मे क़ुर्बानी को मज़हबी अहमियत हासिल थी और यह भी अन्दाज़ा होता है कि हिन्दोस्तान में अम्बिया अलैहिमुस्सलाम (Prophets) आए और आसमानी सहाइफ़ (Revealed Books) भी नाज़िल हुए जिनके नाम यहां मज़हबी किताबों में मिलते हैं। क़ुर्आने करीम में जो मोवाहिदीन (एक अल्लाह में विश्वास रखने वाले) को आम दावत दी गई है उसमें वैदिक धर्म के मानने वाले भी शामिल हैं।

सब मज़हबों के मानने वालों को इसी एक मज़हब की तरफ़ लौटना चाहिए जिसके आसार हर आसमानी किताब और सहीफ़े में नज़र आते हैं और जिसकी हक़ीक़त का पता लगाना कुछ ज़्यादा मुश्किल नहीं, शायद इन्हीं हक़ाइक़ (सच्चाइयों) को ध्यान में रखते हुए डाक्टर इक़बाल ने रामचन्द्र और गौतम बुद्ध वग़ैरह को मज़हबी तारीख़ की अहम शख़्सियत में शामिल किया है चुनांचे रामचन्द्र के लिए इक़बाल कहते हैं :

इस देश में हुए हैं हज़ारों मलक सिरिश्त
मशहूर जिनसे है दुनिया में नामे हिन्द

(कुल्लियाते इक़बाल, पेज 157, बहवाला बांगे दरा, दिल्ली में छपा)

और गौतम बुद्ध के लिए कहते हैं :

क़ौम ने गौतम की ज़रा परवाह न की
क़द्र पहचानी न अपने गौहरे यकदाना की
आह बदक़िस्मत रहे आवाज़े हक़ से बे-ख़बर

उ जा ला

ईमाम अहमद रज़ा का परिचय

-: लेखक :-

प्रो. डा. मो. मसऊद अहमद

एम्. ए, पी. एच्. डी.

- प्रकाशक -

एदारा अफकारे हक़्क़

बायसी बाज़ार - पुर्णियॉ बिहार

रज़ा अकाडमी, नायगांव, नांन्देर (एम्. एस्.)

मुल्य (किमत) :- ६-०० रु.

(सिलसिल - ए - एशाअत)

पुस्तक :- उजाला (हिन्दी)

लेखक :- डॉ. प्रो. मसऊद अहमद (एम्. ए, पी. एच्. डी.)

मुतजीम :- मौलाना गुलाम जाबिर शम्स मिसबाही,
जनाब मास्टर इक़बाल अहमद साहेब.

प्रुफ रिडींग :- मौलाना गुलाम अशरफ अशरफी (पूर्णवी),
मौलाना मोहम्मद मज़हरुल हक़ अशरफी (कटीहारी)

हशबे फर्माईश :- पिरे तरीकत हज़रत अल्लामा सिबतैन रज़ा,
क़ादिरी मदज़िल्लहु, कांकेंर बसतर (एम्. पी.)

मुफ्फकीरे मिल्लत :- हज़रत अल्लामा ज़हिरोद्दी क़ादिरी मदजिल्लहु,
सदर दारुल ऊल्लूम मोहम्मदीया - बम्बई.
हज़रत मौलाना वली मोहम्मद साहेब रुकुन - सुन्नी
तब्लीग़ी जमाअत बासनी - नागोर.

सहायताकार मुआबेसीन (ताऊन फरमाने वाले) :-
हमदर्दे क़ॉम (राष्ट्र) अलहाज मोहम्मद सईद साहब रज़वी बासनी
हमदर्दे कॉम (राष्ट्र) अलहाज वली मोहम्मद साहब रज़वी बासनी
हमदर्दे कॉम (राष्ट्र) जनाब मास्टर अमीनुद्दीन साहब तीन सुकया आसाम

टोपी, किताब, इत्र, अंगूठी, नील वगैरह मिलने का
मरकज गेजाली कुतुबखाना, जुनी मस्जिद,
जोगेश्वरी ईस्ट, बम्बई नं. ६०.

ज़ेरे सरपरस्ती हज़रत अल्लामा अख्तर रज़ा खान अज़हरी

अल्जामे अतूल नज़ामिया मलिकपूर हाट
दलकोला, कटिहार - बिहार (भारत) ७३३२०१.

इसका तआवुन करना आपका मिल्ली फ़रिज़ा है
-- गुलाम नासीर मिस्बाही.

पेशे लफ्ज़

"उजाला" प्रोफेसर डा. मुहम्मद मसऊद अहमद बिन मौलाना मुफ्ती मुहम्मद मजहारुल्लाह नक़शबन्दी पहली, आलमे इस्लाम की जानी पहचानी शखसीयत का नाम है। उर्दू और अंग्रेजी में आपकी इलमी दीनी इसलाही और तारीखी क़िताबे इल्म दानों से खिराजे अक़ीदत हासिल कर चुकी हैं। गुजश्ता बीस साल से मोजाहिदे इस्लाम आला हज़रत इमाम अहमद रज़ा रहमतुल्लाह अलैहे की हयात और कारनामों पर लिख रहे हैं। यह क़िताब "उजाला" भी आपही की एक आसान और अच्छी कोशिश है जिसमें उन्होंने आला हज़रत की पूरी जिन्दगी को समो दिया है। यह किताब वाकयी दरया को कुअें में भर देने के मिस्पाक़ है। अस्ल किताब ऊर्दू ज़ुबान में लिखी गयी है जिसे हिन्दी दाँ लोगों तक पहुँचाने के लिए हिन्दी में शाये किया जा रहा है। इसको हिन्दी में अनुवाद करने का काम मेरी रहनुभाई ने जनाब मास्टर एकबाल अहमद चिरैया कोटी टीचर दारुल ओलूम कादिरिया चिरैया कोट और जनाब मास्टर फरवरे आलम टीचर फैजुल ओलूम मोहम्मदाबाद गोहना ने किया है। मौला तआला इनहज़रात की इस दीनी खिदमत को कबूल फरमाएं - आमीन।

उम्मीद है कि सरकारे आला हज़रत से अकीदत रखने वाले हज़रात इस किताब की निकासी में भरपूर दिलचस्पी लेंगे और हिन्दी तब्के तक इस किताब को ज्यादा से ज्यादा पहुँचाने की कोशिश करेंगे ताकि लेखक और अनुवादक की मेहनत ठिकाने लगे और आला हज़रत इमाम अहमद रज़ा का पैगाम घर - घर पहुँच जाए।

-- मु. अब्दुल मोबीन नोमानी दारुल ओलूम कादिरिया चिरैया
कोट मऊ (यू. पी.) २७६ १२९.
रुक्न अल्मजमउल इस्लामी
मु. बाद, गोहना, मऊ २७६ ४०३.

पेशे लफ्ज़

ईमाम अहमद रज़ा चौदहवी सदी हिज़री के वह महान व्यक्ति है। वह शहरे बरेली युपी १८५६ ई. के इन्कलाबी दौर में पैदा हुए। और वहीं १९२१ के हंगामी दौर में मृत्यु पाये। अपनी उमर के इस थोड़े हिस्से में जो उन्होंने इल्मी व मज़हबी व सियासी व समाजी और दीनी मैदानों में सेवायें अनजाम दिये। वह ना क़ाबीला फरामोश है। वह दुनयाऐ इस्लाम के इत्तिहाद के बुलाने वाले थे। वह मुस्लिम जनताओं के मुस्लेह थे। उनहोंने एक हज़ार से अधिक पुस्तकें लिखीं उस समय उन्होंने लिखना प्रारंभ किया था।

उन्होंने दिन व रात लिखा, सुबह व शाम लिखा, समय-समय लिखा, हलाल व हराम में लिखा, अरबी और ग़ैरे अरबी में लिखा, हालते सफर और हालते हाज़री में लिखा, अकेला और ज़ाहिर में लिखा, तफसिर व हदीस में लिखा, फेकाह व कानून में लिखा, तहक़ीक व तनक़ीद में लिखा, शेर व अदब में लिखा, इतिहास व सैर में लिखा, सरफ मज़ह बीमार में नहीं लिखा, विज्ञान में लिखा, रियाज़ी में लिखा, गणित में लिखा, ज़बरो मकाबला में लिखा, सियासियात में लिखा, इकतसाकिलात में लिखा, अखालाकियात में लिखा, समाजियात में लिखा, पृथ्वीयात में लिखा, विज्ञान भौतिक में लिखा, कितने ज्ञानों को जीवन दिया, कितने ज्ञानों को को मरने न दिया, कितने ज्ञानों को पैदा किया, बचपन में लिखा, जवानी में लिखा, अधेर आयु में लिखा, बुढ़ापे में लिखा, हज़ारो-हज़ार पृष्ठों में लिखा, पुस्तकों का अधिक से अधिक कर दिया, अरबी में लिखा, फारसी में लिखा, उर्दू और अंग्रेजी में लिखा।

ईमाम अहमद रज़ा ने गुमराह दिनों को मिटा डाला, शरई रस्म व रिवाज़ के ऐलाना मिटा दिया, बेराह रवी और इस्लाम के खिलाफ दुश्मनी शक्तियों से युध्द किया, खास तौहीद का सच्चा गुमान पेश किया। मुहब्बते रसूल के दोष जलाये। इस तरह उन्होंने हिन्द व पाक के अन्धेरे समाज में तौहीद व रिसालत का उजाला फैलाया। ईमान वाले बेदार हुए, परवानये तौहीद वरिसालत मचलने लगे, अन्धेरियाँ छटने लगी। ईमान व इस्लाम को प्रकाश तो फैलती चली गई। यह उस भयानक दौर की कथा है कि लोग जब मक़ामे तौहीद और अज़मते रिसालत से ध्यान नहीं दे रहे थे।

मौलाना कौसर नयाज़ी साबिक धार्मिक मंत्री ओमुर व अक़लोती, ओमुर पाकिस्तान जो एक मुम्ताज़ (विद्वान) व अदीब और बेबाक सहाफी व सियासत दाँ हैं। लिखते हैं --

" ईमाम अहमद रज़ा बररे सग़ीर के (छोटे बर) महान विद्वान हैं। वह एक समय लेखक भी हैं और तहकीक़ करने वाले भी, फक़ीह भी हैं। और मुफ्ती भी, कवी भी हैं, अदीब भी, माहिर तिरयाज़ी व हैअत भी है। और वैज्ञानिक भी इतिहासिक भी हैं। और मुफस्सिर भी, सुफी भी हैं और वली भी। उन्होंने लगभग एक हजार पुस्तके लिखीं हैं। यह उस पाया की क़ीमती पुस्तकें हैं कि उनके एक एक पृष्ठ से इस दौर के ज़ौके तस्नीफ के अनुसार एक एक पुस्तक मुरत्तब की जा सकती है। इनमें से कई पुस्तकें छप कर नहीं आयी हैं।

ईमाम अहमद रज़ा ने तक़रीबन १३ वर्ष की आयु से फतवान्वेसी का काम प्रारम्भ किया था। और कामील ५४ वर्ष तक वह मस्नदे इफ्ता पर फाइज़ रहे। उनके फतवे एक एक हजार के बड़े साईज के पृष्ठों पर मुश्तमील बारह जिल्दों में फैले हुए हैं। जिनमें नौ जिल्दें छप चुकी हैं। पद्य में किसी ने प्रश्न पुछा है तो पद्य में उसका उत्तर दिया है। गद्य में पुछा है तो गद्य में दिया है। कवि इतने बड़े हैं कि उनके ना आतिया (कविताएँ) मजमूआ कलाम 'हदाये के बख़शिश' का पूरी उर्दू कविताईक में उत्तर नहीं। अफसोस के हमारी इतिहास की दूसरी महान मनुष्यताएँ कि तरह वह भी एक मज़लूम मनुष्यता हैं। उनके सामने वाले उनका सही जान पहचान नही करा सकें। पढ़े लिखे और अंग्रेज़ी वैज्ञानिक वर्गों में आम तौर पर उन्हें काफ़ीर बनाने वाला विद्वान की हैसियत (स्थिती) से जाना जाता है। मुझे मंजूर करना चाहिए के ये खुद आज से पांच वर्ष पहले उनके बारेमें कई गलत समझ का शिकार था। यह तो जब मैं ने उन्हें पढ़ना प्रारम्भ किया तो मेरी आँखें खुल गयी अधिकता (विला मुबालेग़ा) के सिवा अब तक मैं हज़ारों पुस्तकें पढ़ी हैं। प्राचिन व नया में (उर्दू, फारसी व अरबी) के कम व अधिक तमाम प्रसिध्द क़लम वाले मज़ामीन से बक़दरे हरफ लाम हासिल किया (प्राप्त किया)। कम व अधिक दस हज़ार पुस्तकें तो खुद मेरी ज़ाती पुस्तक भंडार में मौजूद हैं। और उनमें से एक से एक नादीर व नायाबा पुस्तक शामिल है। मैं ने समझ रखा था बहुत कुछ पढ़ लिया है मगर अहमद रज़ा को पढ़ना प्रारम्भ किया तो मालूम हुआ कि अब तक कनारे पर सिर्फ सिपियां चुन रहा था समंदर तो अब निगाहों के सामने आया है।"

मौलाना कौसर नियाज़ी ने ठीक फरमाया के ईमाम अहमद रज़ा के सामने वाले उनका आलमी सतह पर जान पहचान न करा सकें उनका जान पहचान कराना और उन पर पुस्तकें लिखना तो दर किनार ईमाम अहमद रज़ा की पुस्तकें न छप सकीं। हक़िक़त में उनके सामने वालों ने उस शोबा में बेहिसी व बेत्वज्जही बरती (कोई ध्यान और कोई इहसासन की) और उनके मुखालेफीन को खुबसुरत मौका मिल गया उनके बारे में गलत प्रोपेगंडा किया बेबुनियाद इलज़ामात लगाये। तरह तरह के बोहतान तराशे तक़रीर व तबलिग़ और लिखावट के सम्बन्ध के नाम व नसब और सेवाओं को नष्ट करना प्रारम्भ किया। लोगों को गलत समझों में मुबतला करदिया। कभी काफ़ीर बना देने वाला विद्वान का तोहमत लगाया, कभी नये फीरका बानी बतलाया और कभी अंग्रज़ नवाज़ी का इल्जाम लगाया। एक दो नहीं लगातार यह साज़िश चलती रही।

बिल आखिर (अन्त) में एकतायी हिन्द व पाक में पिछले कुछ वर्षों से ईमाम अहमद रज़ा पर तहक़ीक़ी कार्य होने लगा और उनकी पुस्तकें छपने लगी और उनके माननेवालों ने इस आवश्यकता और तक़ाजे को महसुस किया के ईमाम अहमद रज़ा का इन्टरनेशनल सतह पर जान पहचान कराया जाय। उनकी लिखी हुयी छपी जाय। उनकी पुस्तकों पर हाशिया किया जाये वर्णन किया जाय। अरबी व फारसी पुस्तकों का ऊर्दू में शब्दार्थ किया जाय और लाम व जानकारी पुस्तकों को अरबी, अंग्रेजी व हिन्दी में छापें - प्रकाशित किये जाय। काल के छलात व तक़ाज़ों को एहसास किया जाय इस सिलसिले में अल्मजमउल इस्लामी मुबारकपूर मरकज़ी मजलिस रज़ा लाहोर इदारये तहक़ीक़ाते ईमाम अहमद रज़ा कराची रज़ा अकॅड़मी बम्बई के अरकान काबिले जिक्र और लायक़ तकलीद हैं।

इदारये इफकारे हक़ बायसी पूर्णियॉ राष्ट्र बिहार किसी मिशन कि एक खास कड़ी है जो अरबी, उर्दू, हिन्दी और अंग्रेज़ी पुस्तकें प्रकाशित की हैं। जो दीनी - इस्लाही और मालूमाती मज़ामीन पर मुशतमिल हैं। ईमाम अहमद रज़ा की पुस्तकें ही अधिकतम प्रकाशित होती हैं या फिर उन पर लिखी गयी तहक़ीक़ी पुस्तकें प्रकाशित होती हैं। और देश विदेश की खास पुस्तक भंडारों, तहक़ीक़ाती मरकज़ों, **मध्य** विद्यालयों, युनिव्हरसिटी और वैज्ञानिक व क़लम की सेवा में मुफ्त पहुँचाना है। और **धर्म** इस्लाम और उलमा - ए - इस्लाम खास कर ईमाम अहमद रज़ा मिशन कि **इशाअत (प्रचार) मैं** हमा लमहा मसरूफे अमल है।

ईमाम अहमद रज़ा पर दूसरों ने एक इल्जाम रखा है के वह अंग्रेज़ नवाज़ थे। जबकी अंग्रेज़ी नवाज़ी में इल्जाम लगाने वाले खुद बेइन्तेहाई करते थे और करते है। और सारा इल्जाम ईमाम अहमद रज़ा के सर था परन्तु खलिज़ की युध्द ने दुध का दुध जल का जल अलग कर दिया। हालाते हिन्द और गती - ए - दौरन ने यह साबित (प्रमाणित) कर दिया के अंग्रेज के सहायताकार ईमाम अहमद रज़ा थे। या उनके विरोधियों (मुखालिफीन) इस सम्बन्ध में कौसर नयाज़ी लिखते हैं। जो ईमाम अहमद रज़ा के मानने वालों में नहीं है बल्के एक इन्साफ पसन्द हकिकत शनास और ग़ैर जानिबदार व क़लमकार है। उन्होंने ईमाम अहमद रज़ा पर एक पुस्तक लिखी जिसका नाम है " ईमाम अहमद रज़ा - एक महान विद्वान " यह पुस्तक (उर्दू, अंग्रेज़ी) एदारा - ए तहक़ीक़ात " ईमाम अहमद रज़ा" कराची से प्रकाशित हुयी है। दो बाराह "एदारा - ए अफकारे हक़" बायसी पूर्णियां ने अंग्रेज़ी प्रकाशित की है। इस पुस्तक में उन्होंने ईमाम अहमद रज़ा पर लगाये गये बेबुनियाद इल्ज़ामात का जायेज़ा लिया है। लगभग तमाम इल्जामों का ठोस उत्तर दिया है। अंग्रेज़ नवाज़ी के बारे में लिखते हैं --

" और कहने वालों की ज़बान कौन रोक सकता है "। वह तो यह भी कहते हैं कि " हज़रत ईमाम अहमद रज़ा शुरु और अंत अंग्रेज़ नवाज़ महान व्यक्ति थे "। खिलाफत, तरके मवालात और तहरीके हिजरत (आन्दोलन) को सभी इन्कलाबी तहरीकों में उनकी रविश इन्कलाब दुश्मनी पर मबनी थी। भारत के दारुल इस्लाम और दारुल हर्ब होने की बहस में भी उनका नुक़तये नज़र रजअत पसन्दाना था। इसलिए बरे सग़ीर की तहरीक स्वतंत्रता में उन्होंने महज़ मनफी (कृतियाँ) किरदार अदा किया और बस ! !

सबसे पहले इस बात का समझौता करने की आवश्यकता है कि ईमाम अहमद रज़ा पालीटेशन नहीं, इस्टेटन में थे। राजनितिक (सियासी) लीड़र न थे, मुदब्बीर थे, पालीटीशन और सियासी लीडर जनता को खाहीशात के पैरोकार होते हैं। जबकि स्टेटन मैन और मुदब्बीरीन पेशे बीनी करके हालात का रुख खास करते हैं।

कोई शक नहीं कि पिछले लिखे हुए आन्दोलन उतने उतने समय में जज़बातीयत उमड़ता हुआ सैलाब था मगर उन आन्दोलनों का Result क्या निकला ? आन्दोलनों के हिजरत पर तबसरा करते हुए मौलाना रईस अहमद जाफरी नदवी ने लिखा है --

" फिर हिजरत की आन्दोलन उठी (१९) अठारह हज़ार मुसलमान अपना घर - बार,

सम्पति, अहबाब और मनकूला रोने पूने बेचकर ---------- खरिदने वाले अधिकतर हिन्दू ही थे। अफगानिस्तान हिजरत कर गये वहाँ स्थान न मिली, वापस किए गये, सर खप गये, जो वापस आये तबाह हाल खसता, दरदमान्दाह, मुफलिस, कल्लाश, तहीदस्त, बेनवा, बीमार व मददगार। अगर उसे हलाकत नहीं पाते तो क्या करते?" (हयाते मुहम्मद अली जनाह, पृष्ठ-१०८)

और हिजरत की आन्दोलन इस बहस का मन्तीकी नतिजा थी कि भारत दारुल इस्लाम है या दारुल हरब। ईमाम अहमद रज़ा इसे दारुल हरब करार नहीं देते थे। वह जानते थे कि इससे मुसलमानों के लिए सूद खाना तो जायेज हो जायेगा। मगर हिजरत और तलवार उठाना उनपर अनिवार्य हो जायेगा। वह इसे दारुल इस्लाम करार देते थे कि सैकड़ो वर्ष मुसलमान इस पर शासक रहे हैं। अब भी पृथ्वी पर सलामत था। मुसलमानों को धार्मिक फरायेज़ की अदायेगी में कोई रुकावट नहीं। आश्चर्य हैं कि जो लोग अंग्रेज़ के काल में भारत की दारुल हर्ब क़रार देने में मुसिर (इसरार करने वाले) थे। आज हिन्दु राज में इसे दारुल हर्ब क़रार देने का शब्द भी मुह से नहीं निकालते। मतलब प्रकाश है। अंग्रेज़ के सामने हिन्दु पसे-प्रदा (छुपकर) इन फतवों की तार हिला रहे थे। जिन में बारत को दारुल हर्ब क़रार दिया जा रहा था। ताकि मुसलमान अंग्रेज़ के खिलाफ (विरोध) तलवार उठाये। मर खप जाये और जो बाकी बचपन वही हिजरत करके इसी पृथ्वी को ही छोड़ जायें। आज भारत को दारुल हर्ब वक़रार देने वाले मुफतियान-ए किराम के वारिस महरे बलम हैं। और इस तरह अपने अमल से ईमाम अहमद रज़ा के फतवा को तायेद कर रहे हैं।

खिलाफत के आन्दोलन और आन्दोलन के तरके मवालात का मामला भी इस से चन्दान विभिन्न नहीं सन १९१४ ई. में पहला महान युध्द प्रारम्भ हुआ। इसमें भारत से फौजी भरती करने के लिए बरतानिया ने सुचना किया कि युध्द में सफलता प्राप्त करने के बाद भारत को स्वतंत्र कर दिया जायेगा। ज़ाहिर हैं कि इस समय मुसलमानों के सामने पाकिस्तान का नसबूलऐन न था। भारत स्वतंत्र होता तो शासन हिन्दु अधिक तर होती। यही कारण है कि गांधीजी ने फौजी भरती को भरपूर सहायता की और दो लाख के निकट हिन्दु और मुसलमान सिपाही अंग्रेज़ी फौजों के साथ लड़े। तुर्की को इस युध्द में असफलता (हार) प्राप्त हुयी। सफलता पाने के बाद अंग्रेज़ वादे से फिर गया, अब गांधीजी उसे सजा देने की चिन्ता में थे। इस मकसद में खिलाफत का मसला ढुंढ़ निकाला गया हालाके सब जानते थे कि

तुर्की की शासन उस्मानिया अपने करतुतों की कारण खिलाफत के नाम पर एक धब्बे से कम नहीं। मगर एकाएक कहा जाने लगा के तुर्की का बादशहा (राजा) इस्लाम का खलिफा है। और उसकी खिलाफत खत्म (नष्ट) करना इस्लाम पर हमला करने के मुरादिफ़ है। मुसलमान फिर गये। एक आन्दोलन चल निकली। मगर तुर्की तमाशा यह है कि आन्दोलन की क़यादत गांधीजी के हाथ थी। गोवा जो भारत में एक अलग खित्ता पृथ्वी देने के हक़ में न था। वह आलमी सतह पर मुसलमानों की खिलाफत बहाल कर रहा था। ईमाम अहमद रज़ा गांधी के बिछाए हुए इस दामे हमरंग पृथ्वी को खुब देख रहे थे। उन्होंने एकताई क़ौमीयत के खिलाफ उस समय आवाज़ उठाई जब इक़बाल और क़ायदे आज़म की उसकी जुल्फ गिराहगीर के अमीर थे। देखा जाय तो दो क़ौमी नज़रया (राष्ट्रीयता) के अक़िदे में ईमाम अहमद रज़ा मुक़तदा है और यह दोनों हज़ार मुक़तदों पाकिस्तान की आन्दोलन को कभी फरोग (वृध्दी) प्राप्त न होता। अगर ईमाम अहमद रज़ा वर्षों पहले मुसलमानों को हिन्दीओं की चालों से चेतावनी न करते।

यही सुरते हाल आन्दोलन तरके मवाल की थी। गांधीजी मुसलमानों को हिन्दीओं के साथ मिलकर विभिन्न बायकाट के लिए ओकसा रहे थे। ईमाम अहमद रज़ा का मोवक्कफ यह था कि "मवालात" प्रेमी और मुहब्बत को कहते हैं। हुक्म मुशरेकिन और काफिरों से दोस्ती और मुहब्बत न करने का है। लन्दन के मुआमलात छोड़ने का नहीं और जहां तक दोस्ती की रुकावट का सम्बन्ध है इसमें अंग्रेज़ की तख़सिस नहीं इसमें हिन्दु भी शामील हैं। एक मुशरिक से पींगे बढ़ाकर दुसरे मुशरिक का कत्तये ताल्लूक (असम्बन्ध) मुसलमानों को ज़ेब (अच्छा) नहीं देता।

क़ायदे-आज़म मोहम्मद अली जनाह आन्दोलन तुर्के मवालात के मुखालिफ (विरोधी) थे। मगर मौलाना मोहम्मद अली और मौलाना शौक़त अली समेत बहुत से मुसलमान रहनुमा (नेता) इस मसअले में गांधीजी के साथ थे। ईमाम अहमद रज़ा क़लमये हक़ से मुतास्सिर होकर यह सियासी (राजनितीक) अकाबीर (महान व्यक्ती) भी धिरे धिरे हिन्दुओं के राजनितीकता से चेतावनी होते चले गये। खुद डॉ. अलामा इक़बाल एक काल में आन्दोलन के खिलाफत की राजनिती कमेटी के सदर (प्रधान) थे। मगर जब आन्दोलन असले निशाना से चेतावनी हुए तो सदारत (प्रधानता) से इस्तिफा दे दिया। उनके यह अशआर इसी काल की यादगार है---

नहीं तुझको इतिहास से चेतावनी किया
खिलाफत को करने लगा है तुमदाई

खरिदें हम जिस को अपने लहु से
मुसलमानों को है नंगी बादशाही

जिस काल में यह आन्दोलनें चल रही थी इन में अवामी जज़्बात वफरे हुए थे। वैसे भी हमारी क़ौम बदक़िस्मती से इन्तेंहा पसन्द वाक़े हुई है। (बक़ौले कविता)

अफसोस हम चले न सलामत रुबी की चाल
या बेखुदी की चाल चलें या खुदी की चाल

ऐसे में मुखालिफतों और इल्ज़ाम तराशियों की परवाह न करते हुए मसलके एतदाल पर क़ायम रहना और यों राष्ट्रीय नज़रया के फरोग (बरोहती) के लिए मुदब्बराना दुर बीनी की राजनिति पर कारबन्द रहना ईमाम अहमद रज़ा जैसे आहनी आसाब रखने वाले व्यक्ति ही का कार्य था। रहा यह काम के उनके एक दामात पर मबनी थे। तो यह बात वही कह सकते है जो या तो ईमाम अहमद रज़ा के मसलक को सचे से जानता ही नही या जनता हो। मगर जानकर न मानना चाहता हो एक ऐसा मरदे मोमिन जिसे अंग्रेज़ी साम्राज्य से इतनी घृणा (नफरत) हो कि वह उसकी कोर्ट (कचहरी) में जाने को हराम समझता हो। जो मुकददेमा क़ायम हो जाने के बावजूद उसकी अदालत में न गया हो। जो पत्र लिखता हो तो कार्ड और लिफाफा के उलटे ओर पता लिखता हो। ताके अंग्रेज़ राजा और मलका (रानी) का सर निसा नज़र आये। जिसने अपनी मृत्यु से दो घंटे पहले यह वोसियत की हो के इस दालान से डाक में आये हुए। वह तमाम पत्रों जिन पर राजा और रानी की फोटो (तस्वीर) है। और रुपये पैसे जिन पर यह फोटो है। सब बाहर फैंक दिये जाय। ताकि फरिश्ताहा में रहमत (सामराज्य) को आने में कठीनाई न हो जिसने नात गोई में भी किसी को नमूना न माना और उसे बादशाह नात गोईयाँ करार दिया तो हज़रत मौलाना कफायत अली काफी थे। जिन्होंने १८५७ ई. कि युध्द स्वतंत्रता में अंग्रेज़ों के विरोध में जेहाद का फतवा दिया। इस सम्बन्ध में बा-कायदा प्रयास की और १८५८ ई. में मुरादाबाद के चौक में व उन्हें बर सरे आम फाँसी दे दी गयी।उसके बारे में यह कहना के वह अंग्रेज़ का हामी (सहायता) (मददगार) था जैसे कोई कहे के सुरज ज़ुलम्मत, फुल बदबू, चांद गर्मी, समुद्र सुखा, बहार पतझड़, तेज़ तेज़ हवा, पानी हिद्दत, हावा हवस, हिकमत जेहालत का दुसरा नाम है।

पेशे नज़्र क़िताब

" उजाला " ईमाम अहमद रज़ा का मुखतसर तआरुफ माहिर रिज़वीयात डॉ. प्रो. मसऊद अहमद साहब की है। उन्होंने इसमें ईमाम अहमद रज़ा की ताबदारे हयात व खिदमात का इजमाली तआरुफ पेश किया है।

खालिक़े हयात कायेनात उन्हें उम्र खिज़्र अता फर्माया और उनका साया हमारे सरों पर ता देर रखे। (आमीन)

एदारा ए अफकारे हक़ बायसी के यह रविश व ख्वाहिश रही है कि नई-नई जेहतों और सिमतों में कार्य करें। ईमाम अहमद रज़ा के सवानेही खाका से बिल मखसूस हिन्दी दां तबक़ा नावाक़िफ था। अहक़र राक़िमुल दोरुफ ने अपने उस्तादे मोहतरम हज़रत अल्लामा मोहम्मद अहमद मिसबाही मदज़िल्लहु सदर शोबए अरबी अल जामे अतुल अशरफीया मुबारकपूर से अपील किया कि हिन्दी दां हज़रत को वाक़िफ कराया जाये। अतः कौनसी पुस्तक का हिन्दी तर्जुमा करने से अच्छा होगा। उस्ताज़े मोहतरम ने हज़रत मौलाना अब्दुल मोबिन नोमानी साहब रुकुन अलमजऊल इस्लामी मुबारकपूर से तबादलए खेयाल के बाद इस पुस्तक का इन्तेखाब फर्माया। फिर अहक़र ने हिन्दी में करके नोमानी साहब के सेवा में बगरज़ इस्लाह भेज दिया। चुंके उर्दू की हिन्दी की गई थी। और जाबजा हिन्दी अल्फाज़ आम फहम भी इस्तेमाल किया था। हज़रत नोमान साहब ने इस मुसव्वदा को मनसूख कर दिया। और फिर अपने दारुल ऊलुम क़ादरीया चरिया कोर्ट के जनाब मास्टर इक़बाल अहमद साहब के ज़रीये खलिस हिन्दी तर्जुमा करवाया और इसकी झेरॉक्स कापी हमें ईसाल फर्माया। अब तबाअत व किताबत या कम्पोजिंग के मराहिल में जितनी कठीनाइयाँ झिलनी पड़ी है वह बजाए खुद एक खुंचकां दास्तान है। अल्लाह तआला पृथ्वी पर अल्लाह वालों की कमी नहीं अलहाज मोहम्मद सईद साहब रज़वी बासनी और अलहाज फारुक़ अहमद साहब बासनी हमदर्द क़ौम (राष्ट्र) जनाब मास्टर अमीनोद्दीन साहब तीन सुकया आसाम ने माली मदद किया। अल्लाह तआला उन तीनों की सम्पत्ती में बेपनाह बरकतों का नोज़ूल फर्माये। और दीनी काम करने कराने और दीन और हदीस पर चलने की तौफीक अता फर्माये। (आमीन)

अज़ीज़े गरामी मौलाना गुलाम अशरफ अशरफी पूर्णवी और मौलाना मो. मज़हरुल हक़ अशरफी कटिहारी ने मुताअल्लीम (विद्यार्थी) दारुल ऊलूम

मुस्लमीन कल्याण बड़ी अर्क़ रेज़ो से प्रुफरिड़िंग की खिदमात अनजाम दी। खुदाए तआला इन दोंनों की इस खिदमात को क़ुबुल फरमाये (आमीन)! और दिने मतीन भी अधिक सेवा तौफीक़ दें। और दिन व दुनिया में सदा बहार रखें। और इस सेवा को ज़रये नजात बनाये। (आमीन)

अनतिम में हम तमाम मुखलिसीन व माओनिन की क़लब की आथाह गहरायों के साथ शुकरिया अदा करते हैं। जिन्होंने भी दामे, दरेमे, क़देमे, सोखने हमारा हाथ बटाया।

आपका अपना

गुलाम जाबिर शमस मिसबाही

-: उजाला :-

-- लेखक --

प्रोफेसर डॉ. मुहम्मद मसऊद अहमद

एम्. ए., पी. एच्. डी.

दीबाचा (प्राक्कथन)

रमजानुल मुबारक १४०३ हिज़री की एक नूरानी सुबह, एक अज़ीज़ मिलने आये ---- वह वर्षों से लन्दन में रहते हैं, वहां से आये हुए थे ---- दिल में इस्लाम का दर्द रखते हैं ----- बातों बातों में इमाम अहमद रज़ा का ज़िक्र निकल आया ----- फ़रमाया तहकीकी क़िताबें तो बहुत शाये हो चुकी कोई ऐसी क़िताब भी होनी चाहिए जिसको आम पढ़ा लिखा मुसलमान पढ़ सके ---- उसको दलिलों की हाजत नही ----- वह सीधा साधा मुसलमान है ----- पढ़ना चाहता है ----- मगर सच्ची बातें ----- दिल लगती बातें।

अलहमदोलिल्लाह पिछले तेरह वर्षों से अब तक जो कुछ लिखा गया दलीलों के साथ लिखा गया बेदलील कोई बात नही। लिखी गयी ----- इस मकाले में कलम बर्दाश्ता जो कुछ लिखा जा रहा है वही है जो पिछले तेरह सालों में मुताला किया, तहक़ीक़ किया गया, परखा गया, जांचा गया ----- कोई बात ऐसी नहीं जिसकी दलील व हुज्जत न हो फिर भी आख़िर में उन किताबों की फिहरिस्त (सूची) दे दी है जिनके मुताला से यह हक़ायक़ मालूम हो सकते ----- तो उन अज़ीज़ की ख्वाहिश पर जो उनकी ख्वाहिश न थी बल्कि पाक व हिन्द और बैरुन - ए - मुल्क रहने वाले हज़ारो लाखों मुसलमानों की ख्वाहिश थी यह मक़ाला लिखा गया और रमजानुल मुबारक १४०३ हिजरी ही में इसका मुसौव्वदा तैय्यार हो गया, फिर सफ़ाई और तरतीब का काम ज़िलहिज्जा १४०३ हिजरी में हुआ ----- और उम्मीद है कि यह मकाला सफर १४०४ हिजरी तक मन्जर - ए आम पर आजायेगा ----- हक़ीक़त यह है

" दिल से जो बात निकलती है असर रखती है "

दिनांक
१६ जिलहिज्जा १४०३ हिजरी
२४ सितम्बर १९८३ ई.

अहकर -- मुहम्मद मसऊद अहमद
प्रिन्सिपल, गवर्नमेन्ट डिग्री कॉलेज,
ठठ, सिन्ध (पाकिस्तान)

" बिस्मेही तआला "

(अल्लाह तआला के नाम से शुरु)

(१ - १)

ज़माना करवटें बदलता रहता है ----- उतार चढ़ाव होता रहता है ----- कभी उज़ाला कभी अंधेरा ----- कभी अंधेरा कभी उज़ाला ----- ज़मीन पर बसने वाले जब नूर को तरसते हैं ----- अन्धकार के पर्दे उठते चले जाते हैं ----- मिटे मिटे निशानात उभरते चले आते हैं ----- रोशनियाँ फैलती चली जाती हैं ----- हर तरफ उजाला ही उजाला नज़र आता है ----- रास्ता साफ हो जाता है ----- नज़रों से ओझल मंज़िल नज़रों के सामने आने लगती है ----- डगमगाते हुए क़दम जमने लगते हैं ----- पस्त हौसले बुलन्द होने लगते हैं ----- क़ाफ़ला वाले धीरे धीरे जमा होने लगते हैं ----- फिर वही कूच का नक्क़ारा ----- फिर वही धूमधाम की सुब्हनल्लाह, माशाअल्लाह।

एक सदी (शताब्दी) गुज़रती नहीं कि गुबार छाने लगता है ----- जमाने का अमल जिस तरह जिस्मों को मुतअरसिर करता है ----- फ़िक्रों को भी मुतअरसिर करता है ----- अफ़राद (मानव) के हालात बदलते रहते हैं ----- फ़िक्रों की चमक दमक मांद पड़ने लगती है ----- मिल्लत का हाल दिगरगूँ होने लगता है ----- तो फिर वह चमकाने वाला चमकाने वालों को भेजता है जो अंधेरों में जो अंधेरों में उजाला करते हैं ----- रसूलों और नबीयों का सिलसिला तो बन्द हो गया कि खातमुन्नवीयीन सल्लल्लहो अलैहे वसल्लम आ चुके ----- हाँ मगर मुजद्दिद आते रहेंगे ----- अंधेरों में उजाला करते रहेंगे ----- माहौल बदलते रहेंगे ----- इन्कलाब आते रहेंगे ----- आते रहेंगे जाते रहेंगे ----- जाते रहेंगे आते रहेंगे ----- ज़िन्दकी की तरह रवां दवां रहेंगे।

(२)

चौदहवीं सदी हिज़री के शुरु में पाक व हिन्द के मुसलमानों के मज़हबी, सियासी, मआशी (अर्थिक) तमद्दुनी (सभ्यता) हालात दीगरगूँ थे ----- नये नये खयालात नये नये तसव्वरात, नये नये नज़रियात सामने आ रहे थे ----- भांति भांति की बोलियां बोली जा रही थी -----

के चेहरे को साफ़ करता है।

मुजद्दिद उस अल्लाह के खास बन्दे को कहते हैं जो हर सौ साल के बाद उम्मत में पैदा होता है जो गलत रस्म व रिवाज़ और अक़ीदे की ख़राबी को हक कि झलक ।

कोई कह रहा था --

"नमाज़ में हुज़ुर सल्लल्लाहो अलैहे वसल्लम का खयाल आ जाये तो ये अपनी गाय और गधे के खयाल में डूब जाने से भी कई दर्जा ब बुरा है"।

कोई कह रहा था --

"जिसका नाम मुहम्मद या अली है वह किसी चिज़ का मुख्तार नहीं"।

कोई कह रहा था --

"हुज़ूर सल्लल्लाहो अलैहे वसल्लम हमारे बड़े भाई के बराबर हैं और आपकी ऐसी इज्ज़त की जानी चाहिए जैसे बड़े भाई की की जाती है"।

कोई कह रहा था --

"ख़ातमुन्नबीयीन का यह मतलब नही कि हुज़ूर सल्लल्लाहो अलैहे वसल्लम सबमें आख़िरी नबी हैं"।

कोई कह रहा था --

"अल्लाह तआला झुट बोल सकता है"।

कोई कह रहा था --

"मीलादुननबी की महफिलों को सजाना और उनमें शरीक़ होना नाजाइज़ है ख्वाह यह महफ़िले शरीअत के मुताबिक हो या न हो"।

कोई कह रहा था --

"जैसे हुज़ूर सल्लल्लाहो अलैहे वसल्लम को ग़ैब का इल्म है ऐसा इल्म तो बच्चों, पागलों, जानवरों, दरिन्दों (नरभक्षी) सबको हासिल है"।

किसी ने कुरआन पर ऐतराज़ किया ----- किसी ने हदीस पर ऐतराज़ किया ----- किसी ने दीन के इमामों पर ऐतराज़ किया ----- सल्फेस्वालिहीन (पिछले बुज़ुर्गों) पर ऐतराज़ किया ----- किसी ने सुफिया-ए-किराम पर ऐतराज़ किया ----- किसी ने ओलमा-ए-हक़ पर ऐतराज़ किया ----- और दिल की वह जमीन जहां कभी ईमान व यक़ीन बसा करते थे अब वहां शक और शुब्हे बसेरा करने लगे ----- **यह था चौदहवी सदी के शुरु का माहौल।**

सियासी माहौल यह था ----- औवल औवल यह तहरीक चलाई कि मुसलमानों को हिन्दुओं के करीब लाया जाय ----- फिर तहरीक चली कि सिर्फ हिन्दु भाईयों की खातिर गय की कुरबानी छोड़ दी जाय ----- इस तरह पाक व हिन्द से इस्लामी शिआर (स्वभाव) मिटाने की कोशिश की गयी ----- एक तहरीक इटली के खिलाफ़ चली और मुसलमानों की तुर्की टोपियाँ जला ड़ाली गयी यह कह कर के उनका कपड़ा इटली से आता है ----- एक तहरीक चली कि जंग-ए-अज़ीम में अंग्रेज फ़ौजों के साथ लड़ने के लिए (अरबों और तुर्कों के ख़िलाफ़) पाक व हिन्द के मुसलमान फौजियों को भेजा जाय इस तरह हज़ारो मुसलमान मुसलमानों के हाथों शहीद हुए ----- यह सारा खून ख़राबा इस उम्मीद पर कराया गया कि हिन्दुस्तान को शोहदा के खून के बदले आज़ादी मिलेगी मगर वो उस वक्त तक न मिलनी थी न मिली ----- फिर तहरीक-ए-ख़िलाफत और तहरीक-ए-तर्के मवालात (असहयोग आन्दोलन) चलायी गयी और इस के पर्दे में हिन्दुस्तान की आज़ादी का ख़्वाब देखा गया और मुसलमानों को पंगु बना दिया गया ----- मुसलमानों के पास पहले ही क्या था ----- जो कुछ था वह इस बहाने लेने की कोशिश की गयी ----- इसी पर बस नही किया गया ----- तहरीक-ए-हिज़रत चलाकर मुसलमानों को उनकी ज़मीनों और जायदादों से महरुम किया गया ----- खद्दर की तहरीक चला कर एक तरफ़ मुसलमान बुनकरों की कमर तोड़ दी गयी और दूसरी तरफ़ खद्दर की गांधी कैप तैयार करा कर साफ़ा और तुर्की टोपियों की जगह पहनायी गयी ----- इस तरह पाक व हिन्द से इस्लाम की निशानियाँ मिटाने की कोशिश की गयी ----- पशु वध के विरोध में तहरीक चला कर कस्साबों का कारोबार सर्द किया गया और मुसलमानों को अम्बिया की सुन्नत से महरुम किया गया।

अलग़र्ज़ हर तहरीक मुसलमानों को राजनीतिक और आर्थिक स्थिती पर कमज़ोर करती चली गयी और मुसलमान अपने सिधापन और अदूरदर्शिता की वजह से इन तहरीकों में बढ़ चढ़ कर हिस्सा लेते रहे और अन्जाम से बेखबर रहे ----- अन्जाम की जब ख़बर हुई, जब तबाही ने आ घेरा बल्कि बाज लोगों को उस वक्त भी एहसास न हुआ ----- अल्लाह, अल्लाह बेहिसी सी बहिसी थी।

दीन-ए-इस्लाम के लाले पड़ रहे थे ----- दीन के निशानियों पर घावे बोले जा रहे थे ----- मुसलमानों को बेदस्त व पा यानी पंगु किया जा रहा था ----- इस्लाम की मस्ती खत्म हो रही थी ----- वतन परस्ती का जुनून बढ़ रहा था ----- मुसलमान होना फ़ख्र का करण नहीं समझा जा रहा था ----- सिर्फ़ हिन्दुस्तानी

होने पर फ़ख्र किया जा रहा था ----- अल्लाह और अल्लाह वालों की मुहब्बत पिछे जा रही थी ----- ज़मीन और अहले ज़मीन की मुहब्बत आगे बढ़ रही थी ----- **यह था उस जमाने का सियासी माहौल।**

और मआशी हालात यह थे ----- तिजारत (व्यापार), खेती, कारीगरी, मुलाज़मत में मुसलमान पछे जा रहे थे ---- इनकी जायदादें और ज़मीनें औरों के पास रहन थी ----- वह सूद दर सूद के बंन्धनों में जकड़े हुए थे ----- मुक़द्दमा बाज़ी का वह ज़ौक़ व शौक़ की घर का सारा असासा लुटा कर कंगाल हो गये, पैसे पैसे के मुहताज हो गये तो भी कोई परवाह नही ----- सैर व तफ़रीह और खेल कूद का यह लपका कि आन की आन में खून पसीने की कमाई दाव पर लगा दी ----- अखलाक़ी हालात इससे भी गये गुज़रे थे ----- अलग़र्ज़ मुसलमान मआशी तौर पर हिन्दुओं, अंग्रेजों और खुद अपने नफ्स के हाथों गिरफ्तार थे ----- और आने राले दौर में तरक्क़ी व खुशहाली की कोई उम्मीद नज़र नहीं आती थी।

तहज़ीबी और तमद्दुनी हालात भी अच्छे न थे ----- मुसलमानों को अंग्रेजी तहज़ीब का दिलदादा बना दिया था ----- अंग्रेजी तहज़ीब की एक एक अदा को दिलनशीं किया जा रहा था ----- यह ज़हर ऐसा फैला कि आज तक उससे छुटकारा न मिल सका ----- उधर कुछ हिन्दु इस फिक्र में लगे हुए थे कि मुसलमानों को हर तरह अपने रंग में रंग दे, इस मक़सद के लिए उन्होंने एक भरपूर तहरीक चलायी जिसने पाक व हिन्द के दर्दमन्दों को झिंझोड़ कर रख दिया ----- मुसलमानों को मुर्तद (धर्म भ्रष्ट) बनाया गया ----- हिन्दु तहज़ीब का रंग उन पर चढ़ाया गया।

आज से एक सदी पहले ये उथल पुथल थी ----- गुमराही पर गुमराही छा रही थी ----- उजाले को लोग तरस रहे थे ----- खुदा की रहमत को जोश आया और फिर वह आया जिसने अंधेरों में उजाला किया ----- सिराते मुस्तक़ीम (सत्यमार्ग) का पता बताया ----- हाथ पकड़ पकड़ कर रास्ते पर लगाया ----- हिदायत (निर्देश) पर ऐसा हरीस की गुमराहों की गुमराही पर बल खाता और तड़पता ----- वह दिल से चाहता था कि चारों तरफ इस्लाम का बोल बाला हो ----- वह इस्लाम का शैदाई था ----- वह इस्लाम का फ़िदाई था ----- वह इस्लाम का मतवाला था ----- कौन? ----- इमाम अहमद रज़ा क़ादिरी बरेलवी।

(२ - १)

इमाम अहमद रज़ा इस्लामी दुनिया के जलीलुलक़द्र आलिम (दिग्गज विद्वान) थे ---- खुदा रसीदा थे ----- एक अबक़री (अपुर्व बुध्दि का मनुष्य) थे ----- मुहम्मद मुस्तफ़ा सल्लल्लाहो अलैहे वसल्लम का एक मोज़ेज़ा थे ----- उन्होंने कुरआन मजीद का बेसाख्ता (निःसंकोच) और बामुहावरा उर्दू तर्जमा किया ----- और तफ्सीर लिखनी शुरु की तो सुरह-ए-वद्दोहा की चन्द आयतों की तफ्सीर छः सौ सफ्हात से आगे बढ़ गयी ----- वह ज़िन्दगी भर भी तफ्सीर लिखते तो ज़िन्दगी खत्म हो जाती मगर तफ्सीर खत्म न होती वह इस्लामी ओलूम के अथाह समुद्र थे ---- जिस ओर चलते, चलते चले जाते ----- अहादीस पर महारत का यह आलम था कि मक्का मुअज्ज़मा और मदीना मुनौव्वरा के ओलमा उनको 'इमामुल मुहद्दिसीन' के जबरदस्त (धर्मशास्त्र) खिताब से याद कर रहे हैं ---- फिक़ाह में गहराई की यह कैफ़ियत कि जब मक्का के एक आलिम ने आपका अरबी फतवा मुताला किया तो बेसाख्ता पुकार उठे, "यह फतवा इमाम अबू हनीफ़ा देख लेते तो उनकी आँखें ठंड़ी हो जाती और इसके लिखने वाले को अपने शागिर्दों में शामिल कर लेते" ----- और रियाज़ युनिव्हरसिटी के एक प्रोफेसर ने जब आपका लिखा हुआ एक अरबी फ़तवा देखा तो फड़क उठा और उस एक ही फ़तवे से अन्दाज़ा लगा लिया कि आप कितने जलीलुलक़द्र फ़क़ीह (ज़बरदस्त आलिम) हैं -----

इमाम अहमद रज़ा की फ़िक़ह में जानकारी का इस्लामी दुनिया में जवाब न था ----- उनके मुखालिफ़ भी इस हक़ीक़त को तसलीम करते हैं ----- अरब के ओलमा ने आपसे फ़तावा पूछे और आपने लाजवाब जवाब दिए ----- फ़िक़ह में आपकी जानकारी पर भारत की पटना युनिव्हरसिटी ने डॉक्टरेट की डीग्री दी है ----- लन्दन युनिव्हरसिटी (हॉलैन्ड) के प्रोफेसर आपके फ़तावा का मुताला कर रहे हैं -----

(२ - २)

फेक़ह में उनकी विद्ता भारत और पाकिस्तान के न्यायालयों के न्यायाधिशों पर भी बैठा हुआ था। भावलपुर हाई कोर्ट के जज से जब एक फैसला न हो सका तो उसने हुक्म दिया कि मुक़द्दमा फैसले के लिए अहमद रज़ा की सेवा में पेश किया जाय। मुक़द्दमा इफतिफता (प्रश्नावली) की शक्ल में पेश किया गया

और अहमद रज़ा ने ऐसा बिदूतापूर्ण जवाब दिया जिसने जजों को आश्चर्यचकित कर दिया। यह फतावा रिज़वीया था की इगारहुंवीं की जिल्दों में आज भी मौजूद है। बम्बई हाई कोर्ट मशहूर पार्सी जज प्रौ. जी. एफ्. मुल्ला अहमद रज़ा की विद्ता की सराहना करते हुए कहता है भारत और पाकिस्तान में फिक़ह में दो अद्वितीय किताबे लिखी गयी एक फतावा आलमगीरी और दूसरी फतावा रिज़वीया।

वह भारत व पाक की हाई कोर्टों के जजों के विचार हैं ----- अहमद रज़ा की ज़िन्दगी और फिक्र का हर पहलू इस लायक़ है कि उस पर तहक़ीक़ वह रिसर्च की जाय। निःसंदेह वह अपने आप में निया थे।

क़ुरआन तफसीर हदीस फेक़ाह तौक़ीद (समय विज्ञान), व फरायोन (बगसत का क़ानून) तो उसके खास मैदान थे। मगर वह पचास से ज़्यादा कला विज्ञान में नीपुन थे। यही नही बल्कि हर कला विज्ञान में वह अपनी यादगारें छोड़ कर गये हैं जिन पर काम करना किसी तनहा आदमी के बस की बात नही। एकाडमी का काम है।

लेखक के ज़ाती कुतुल याने (वाचनालय) में तीस से अधिक कला विज्ञान में अहमद रज़ा के एक सौ से ज्यादा हस्त लेखे के फोटो मौजूद हैं। प्रकाशन इसके अतिरिक्त है। जिन की संख्या भी एक सौ से कम न होगी। इन से तो कुछ किताबें ऐसी हैं के विद्याप्रेमी देख देख आश्चर्यचकित होते है। और अपने आपको लाचार पाते हैं। और वह जो कभी अहमद रज़ा को जाहिल कम इल्म कहते थे इन अनोखी यादगारों को देखते हैं तो दम बखुद (किंमतर्व्य गलत विमूढ़) हो जाते हैं और सहसा कह उठते हैं कि अहमद रज़ा के बारे में हमें जो कुछ बताया गया था सरासर झूठ था, अल्लाह - अल्लाह यह अनोखी यादगारें वह है जिन्होंने जाहिल तो जाहिल अलिमों को भी एतराफ़े - जेहल पर मजबूर कर दिया।

अल्लाहु अकबर - अहमद रज़ा के इल्मों फज़्ल की बुलन्दियाँ तो देखिए कि ओल्मा उनके आगे शीर झुकाये हुए हैं। अहमद रज़ा के व्यक्तित्व का एक पहलू नहीं बीसों पहलू हैं। एक से एक विलक्षण लेखक में अहमद रज़ा की विस्तृत जीवनी का एक खाका तैयार किया था। जो १९८२ इ. में कराची से प्रकाशित हुआ था। उसमें अहमद रज़ा की जीवनी को पन्द्रह खन्ड़ों में समेटने की कोशीश की गयी है। जिनका व्यक्तित्व पन्द्रह खन्ड़ों में भी न समाये उसकी विशालता का अन्दाज़ा किया जाय।

(२ - ३)

अहमद रज़ा ऐक्यवादी (एक खुदा को मानने वाले) थे। उनके खयाल में ऐक्यवाद यह नही है खुदा के नेक बन्दों से पीठ फेर कर अल्लाह के आगे सर झुकाया जाय। उनके अनुसार खुदा के नेक बन्दों की प्रियता का स्थान गैर नही। इबलीस इस नुकता को न समझा और मारा गया। अगर अल्लाह को एक मानना और सिर्फ उसके आगे झुकना ऐक्यवाद (तौहीद) होता तो इबलीस न मारा जाता बल्कि उसको इनाम से विभूषित किया जाता और महान एक्यवादी स्विकार किया जाता है। आदम की तौहीन करने पर मरदूद ठहरा और महानता के आसन से गिराकर नीचता की गुफ़ाओं में ढ़केल दिया गया।

अहमद रज़ा के विचार में ऐक्यवाद यह है कि खुदा को प्रिय बन्दों की मोहब्बतों और महानताओं से दिल को आबाद किया जाय फिर अल्लाह के आगे झुका जाय कि विरान दिल झुकने के क़ाबिल ही नहीं। अहमद रज़ा की विचार धारा में अल्लाह ही अल्लाह छाया हुआ है। वह फिक्र और ज़िन्दगी के हर गोशे में अल्लाह की तलवागरी देखना चाहते थे। भौतिक विज्ञान, ज्योतिष विज्ञान, राजनितिक विज्ञान, अर्थशास्त्र, गरज कला विज्ञान की हर शाख उसी एक असल से फूट रही है। तो फिर उनका ज़िक्र क्यों न हो? हमारे सब हात उनकी ज़िक्र से खाली क्यों है? हमने उनको क्यों भुला दिया जिन्होंने जिन्दगी दी, इल्म दिया, बोलना सिखाया, जिसने कलम पकड़ना सिखाया। जिनके उपकार से इन्सान कभी सुबुकदोश नही हो सकते। फिर ऐसा एहसान फरामोश क्यों हो गया कि अपने मौहसिन को भूल गया और यह समझ बैठा कि सब कुछ खुद ही हो रहा है। न भौतिक विज्ञान में खुदा का जिक्र, न रसायन विज्ञान में, न जीव विज्ञान में, न वनस्पती विज्ञान में, न अर्थ शास्त्र में। अहमद रज़ा का कहना था कि कोई कला विज्ञान इसके ज़िक्र से खाली न होना चाहिए। यह एक ऐसा क्रान्तिकारी विचार था कि अगर इस पर अमल किया जाता तो दिल व दिमाग इस तरह वीरान न होते। जिस तरह आज वीरान है।

अहमद रज़ा का इसरार था कि हर किताब में उसका जिक्र होना चाहिए। क्योंकि पढ़ने वाला बन्दगी को शऊर लेकर उठे। जिसको बन्दगी का शऊर आ गया उसे जिन्दगी का शऊर आ गया। जो बन्दगी से बेखबर है वह खुद जिन्दगी से बेखबर हैं। और हाँ अहमद रज़ा ने हर कला विज्ञान में लिखा लेकिन कहीं अपने आक़ा व मौला को नहीं भूले जो कुछ कहा कर दिखाया और आने वालों को सब

दे गये। अल्लाह के खयाल और अल्लाह की याद में उन्हें ऐसा मुखलिस बना दिया कि उनके अखलास को देख कर अम्बिया अलैहे हुम्मुसलाम का एहसास याद आता था। बल्कि देखकर खुदा याद आता था। उनके अखलास का यह हाल था कि ऐसे ऐसे फतवे लिखे ऐसे ऐसे रसाले और किताबे लिखीं जिनके सामने वर्तमान काल के उच्च कोट गलेशणापूर्ण निबंध हेच नज़र आते हैं मगर एक पायी न ली। तकरीरे की मगर एक पैसा न लिया। ताबीजात किये मगर एक कौड़ी न ली। वह अखलास का पैकर था। उन्होंने जो कुछ किया अल्लाह के लिए किया, जो कुछ कहा अल्लाह तआला के लिए कहा। उनकी दोस्ती और दुश्मनी सब अल्लाह के लिए थी। उन्हों ने कभी नमाज़ या जमात न छोड़ी। सफर व हजर में उन्होंने नमाज़ या जमात का एहतमाम किया मृत्यु रोग में भी उनको नमाज़ याद रही। अन्तिम छड़ों में भी वह अल्लाह को याद करते रहे और याद करते करते अपनी प्रिय जान मालिक के हक़ीक़ी के सपुर्द किया।

(२ - ४)

यही अल्लाह की मोहब्बत थी जिसने उनको अल्लाह के महबुब का शैदायी बना दिया। वह मोहब्बते मुस्तफा और इश्क रसुल को मुसलमानों की मिल्ली जिन्दगी में यह बुनियादी हैसियत देते है। क़ौमें इश्क ही से जिन्दा रहती है। मिल्लते मुसलेमाह भी इश्क ही से जिन्दा हुई, इश्क ही से जिन्दा रही, इश्क से जिन्दा रहेगी। इश्क जितना मजबूत होगा जिन्दगी उतनी पायेदार होगी।

अहमद रज़ा मोहब्बत की मौत को मिल्लत की मौत समझते थे। इसलिए उन्होंने मोहब्बत की खातिर देशव्यापी आन्दोलन चलाया। दिलों को मरने न दिया, जिन्दा रखा उनको मालूम था इश्क व मोहब्बत में सहाला का सर्फराज किया वह इश्क - ए - मुस्तफा के साथ साथ इल्म - ए - मुस्तफा के भी प्रचारक थे। उनका कहना था कि दुनिया जहान के इल्म कुरआन में हैं। कुरआन - सिनिऐ - मुस्तफ़ा में तो फिर दिन - सिनिऐ - मुस्तफा में दुनिया जहान के इल्म क्यों नहीं? उनके नजदीक हुज़ूर को जो कुछ हो चुका और जो कुछ होने वाला है सब की खबर है। जो हुजूर की नकात की सबसे बड़ी विशेषता है। डा. एकबाल भी अहमद रज़ा की ताईद करते हैं। और इल्में गैब को जलूवत की विशेषता करार देते हैं। अहमद रज़ा की दृष्टि में शरियते नुबुवत की भी दोस्त था दुश्मन जिसमें भी शरियत के खिलाफ़ कदम उठाया उन्होंने कठोर आलोचना की और पूरी सख्ती से रोकने का प्रयत्न किया उनके सामने व्यक्तित्व में बल्कि शरियत थी उसने शरियत को मानक बनाया यही उनके विचार धारा की विशेषता है।

(२ - ५)

उसने इन्सान के विचार और जीवन में सुधार का बेड़ा ऊठाया। नर्मी से, प्रेम से, कठोरता से, जिस तरह बन पड़ा विचार धारा में सुधार करने के कर्तव्य को पुरा किया। अहमद रज़ा का विचार था कि इन्सान में मूल चीज़ उसकी विचार धारा है। अगर यह सही है तो जिन्दगी सही है, समाज सही है, राजनीत और शासन सही है और यदि विचार धारा ही सही नही तो कुछ भी सही नही। दुनिया में सारी गड़बड़ी, इसी विचार धारा के बिगड़ जाने और दिल में विरान हो जाने से पैदा हुई है। इसलिए हुज़ूर सल्लल्लाहो अलैहे वसल्लम ने और एक आर्थिक समयत्तता के लिए कोई उद्योग न लगाया, हाँ एक दिल का उद्योग लगाया और दिलों को बनाया, संवारा, इन्सान बनाया फिर जो चारवाहे थे देखते ही देखते मुसलमानों के शासक बन गये। सिपह सालार और मार्गदर्शक बन गये। और दुनिया के सामने ऐसी शानदार मिसालें छोड़ गये कि इस प्रगतिशील युग में ढुंढ़ने से भी न मिलेगी, तो मुल चिज़ दिल और दिमाग है। उसके बिगाड़ से क़ौमें बिगड़ जाती हैं। उसके बिगाड़ से शहर विरान हो जाते हैं इन्सान इन्सान का शिकारी हो जाता है। निर्दय और खूँखार हो जाता है।

(२ - ६)

अहमद रज़ा के सुधार आन्दोलन को कुछ लोग तकफीरी आन्दोलन करार देते हैं और अपने उन पूर्वजों के नाम गिनाते हैं जिनकी अहमद रज़ा ने तकफीर की। लेकिन वास्तविकता यह है कि चन्द दिमाग वालों में इस्लाम का ऐसा मानक पेश किया जिसे हज़ारो लाखों बल्कि करोड़ो मुसलमान निर्धन काफिर करार पाये रसूल के अनुयाइयों ने जिनको हुज़ूर सल्लल्लाहो अलैहे वसल्लम ने अपना बनाया था इन बुध्दिमानों ने उनको काफ़िर करार दिया। कुफरो शिर्फ था इल्जाम लगाकर उनको शहिद किया और शहिद कराया। उनके घरों को नष्ट किया। उनकी सम्पत्ति को लूटा, उनकी औरतों को हलाल जाना और हर वह काम किया जो एक मुसलमान एक काफ़िर हरबी के साथ करता है। यह सब कुछ हुआ मगर कहने वाले कहते हैं कि यह दुखभरी कहानी मत सुनाओं, दामन के दाग न दिखाओ, भुल जाओ जो कुछ होना था हो चुका हिंसक के हाथों को चुमो और हत्यारे के साथियों को बुरा न कहो अल्लाह अल्लाह यह कौन सी बस्ती है जहाँ का विधान ही निराला है।

वास्तविकता यह हैं कि अहमद रज़ा की विशेष की आलोचना की है और नेक और धार्मिक जनता को उनकी तलवारों और उनके गलत फतवों से सुरक्षित रखा। वह जनता के पक्षधर थे। वह जनता के रक्षक थे। वह समझते थे कि बिगाड़ ओलमा से पैदा होता है उनको ठीक करना है और सिधी मंजील दिखाना आवश्यक है। उन्होंने निराधार तकफीर न की वह दिवाने न थे, हजारो बुध्दिमान उनके बुद्धिमत्ता के आगे तुल्य हैं तो फिर ऐसा क्यों किया? बात यह है कि अगर किसी मरिज़ को बुखार होगा तो डॉक्टर और हकीम उसको बुखार ही बतायेंगे और कोई दोषी होगा तो जज उसको दोषी ही करार देगा। अब डाक्टर और हकीम से यह कहना -- जिसको देखा बुखार बता दिया और जज से यह कहना कि जिसको देखा दोषी बना दिया। अजीब सी बात है। अहमद रज़ा ने जिन जिन चिज़ों की तक्फीर की उनके दामन बेदाग न थे बल्कि खुद अनुयाइयों ने स्विकार किया कि इबारतों का वह अर्थ किया जाय जो अहमद रज़ा ने लिया तो निःसंदेह कुफ्रलागु होता है।

वास्तव में न मरीज़ बनाया जाता है, न दोषी बनाया जाता है वह तो अपने अपने कर्तव्य से मरीज़ और दोषी बनते हैं। हकीम और डाक्टर का काम यह हैं कि वह मरीज़ को पहचाने और हुक्म लगाये जज का काम यह हैं कि वह जुर्म की निशान देही करे और हुक्म लगाये। यही कुफ्र और शिर्क का हाल है। कोई भी व्यक्ति स्वयं अपनी कथनी और करनी से काफ़ीर और मुशरीक बनता है। किसी को काफ़ीर कह देने से कोई काफ़ीर नही हो जाता मगर उसके कुफ्र की निसान देही और उसकी कुफ्र का एलान वही कर सकता है जो कुफ्र के रंग को पहचानता है। हर व्याक्ति फतवा नहीं लगा सकता। अध्ययन के दौरान बुढ़ापे की कुछ भोली सूरतों की जवानीयों का हाल पढ़ा तो आँखें खुल गयी। कुरआन के एक अनुवादक जवानी अकल के दोस्त और इस्लाम के दुश्मन निकले। एक अन्य कुरआन के अनुवादक नास्तिकता की घाटियों सरगरदां नज़र आये। यह उन लोगों में से हैं जिनका पिछा अहमद रज़ा ने किया था और उनकी कथनी व करनी पर कठोर आलोचना की थी। मैं तो यह कहुंगा कि अहमद रज़ा की कठोर आलोचना ने स्थिति में सुधार का काम किया, उनकी ललकार खाली न गयी बल्कि यह करामत दिखा गयी कि बुध्दिपूज को और नास्तिकों को कुरआन का अनुवादक बना दिया।

वास्तव में अहमद रज़ा की आलोचनाओं ने फितवों को दबाया और आस्थाओं को सुधारा। अहमद रज़ा की विचार धारा में जान है, पैसलों में वजन है। अहमद रज़ा ने ऐसी विचार धारा निर्मित की जो इस्लाम के अनुरुप भी उनके

विरोधियों ने ऐसी विचार धारा घोषित की जो कुफ्र के अनुरुप और उसकी समर्थक थी। अहमद रज़ा की यह शिकायत थी कि उनके विरोधी हुज़ूर सल्लल्लाहो अलैहे वसल्लम की शान में अपमान क्यों करते हैं? विरोधियों को यह शिकायत थी कि अहमद रज़ा उनको और उनके पूर्वजों को बुरा क्यों कहते हैं? यही से दोनों की विचार धाराओं की बुलंदियों और पस्तियों का अच्छी तरह अनुमान लागाया जा सकता है।

(३ - १)

इतिहास की विभिन्न अवधि में धार्मिक और राजनितिक शक्तियों का टकराव रहा है। राजनितिक शक्तियाँ यह चाहती हैं कि धार्मिक और आध्यात्मिक शक्तियों को अपना ,स्तेनगर बना लें। इसके लिए अन्य नाना प्रकार के यत्न करती हैं। मगर धीर-वीर और पौरुष हृदय वाले कभी उनकी चालों में नही आते। कभी उनके जाल में नही फंसते। अपने कर्तव्यों का निर्वाह किये जाते हैं।

अहमद रज़ा का सबसे महत्वपुर्ण कृतित्व यही हैं कि उन्होंने धार्मिक एवं आध्यात्मिक शक्तियों को वर्तमान राजनिति के अधिन न आने दिया और तन, मन, धन को बाज़ी लगा दी। उसने राजनैतिक शक्तियों से टक्कर ली और तटस्थता एवं मसलेहत अन्देशों को अपने पास फटकने न दिया। वह अपने समकालीन उलमा और सुकिया में इस विशषता में अत्यन्त श्रेष्ठ नज़र आता है। उनके समय में राजनैतिक शक्तियों का धर्मिक शक्तियों से महान टकराव था। यदि अहमद रज़ा न होते तो सभ्यवतः राजनितिज्ञ धार्मिक शक्तियों को अपने अधीन कर लेने में सफल हो जाते। बल्कि करीब-करीब सफल हो ही रहे थे कि अहमद रज़ा की पुकार ने बाँसा पलट कर रख दिया।

(३ - २)

वह लोग जो अपने विचार में मुसलमानों के काम के लिए काम कर ही रहे थे मगर वास्तव में वह दूसरों के लिए काम कर रहे थे। उन्होंने अहमद रज़ा को बदनाम करने की भरपूर कोशिश की। मशहूर किया गया कि अहमद रज़ा अंग्रेजों के शुभचिंतक और सहायक हैं। उत्तेजन पूर्ण समय था, बात प्रसिध्द हो गयी। इतिहास में इससे बड़ा झूठ कभी न बोला गया होगा। अहमद रज़ा अंग्रेजों से बेज़ार थे। उनकी शासन, उनकी राजनिति, उनकी सभ्यता एवं संस्कृति, उनका न्यायालय, उनकी भाषा अर्थात उनकी हर चीज़ से बेज़ार थे। उनका व्यक्तित्व, उनका घर इस्लाम के

रंग में रंगा हुआ था जबकि उनके कुछ विरोधी के घर अंग्रेजी सभ्यता एवं संस्कृति के नमुने बने हुए थे। लेखक ने अपने शोध कार्य मकाले गुनाह - बेगुनाही में इस आरोप की तहकीक की है। यह पुस्तिका १९८३ ई. में दो बार पाकिस्तान में प्रकाशित हुई और एक बार भारत से। पाक व हिन्द के सुदूर में उसकी पाँच हज़ार कापियाँ फैल चुकी है जो विद्वानों की नजरों से गुज़री और सबने मतैक्य प्रकट किया कि अहमद रज़ा पर अंग्रेज दोस्ती का आरोप सरासर ग़लत है।

अहमद रज़ा अंग्रेजों के सहायक क्या होते, वह अंग्रेजों को तो अहेलसुन्नत से बैर था। उन्होंने वहादुर शाह ज़फर से शासन छीना जो पक्का सुन्नी था। यही कारण हैं कि अंग्रेजों ने अहलेसुन्नत के मुकाबिले में उनके विरोधियों के विद्यालयों की मदद की।

१८५७ ई. की क्रान्ति से पहले अहलेसुन्नत के विद्यालय फल फुल रहे थे। क्रान्ति के पश्चात ओस सी पड़ गयी और पाक व भारत में उनकी दशा दयनीय हो गयी। अंग्रेज समझता था कि विचार धारा का निर्माण विद्यालयों से होती हैं। इसलिए ऐसे विद्यालयों पर नज़र रखी जाय जहाँ मुजाहिदीन (बलिदानो) तैयार हों मगर इस विवशता के वातावरण में भी अहमद रज़ा ने जो लेखनी और विचारों से निहाद (संघर्ष) किया उसने मुसलमानों को जिन्दा किया और अन्ततः ऐसी आन्दोलन चला जिसके फलस्वरुप अंग्रेजों को भारत से जाना पड़ा।

(३ - ३)

अहमद रज़ा ने भारत - पाक के मुस्लिम अल्पसंख्यकों के अधिकारों की रक्षा में अपने जान और अपनी मर्यादा की भी चिन्ता न की। बहुसंख्यकता, अल्पसंख्यकता के अधिकारों के निर्वाह में सौहादपूर्ण नहीं होती इसलिए अधिकारों के संरक्षण के लिए बहुसंख्यकता का जागरण अनिवार्य है। अधिकारों के दमन से असुरक्षा की अनुभूति उत्पन्न होती हैं और जब यह अनुभूति बढ़ जाती है तो पृथक्करण की बाते होने लगती है। पिछली पिढ़ी इस अनुभव से गुज़र चुकी। कुफ्कार व मुश्रिकीन के प्रताणन और अन्याय से भारत - पाक के मुसलमानों में असुरक्षा की भावना पैदा हुई। देश विभाजित हुआ। पाकिस्तान अवास्तित्व में आया फिर पूर्वी पाकिस्तान में इसी प्रकार की स्थिति उत्पन्न हुई। पाकिस्तान विभाजित हुआ। बांगलादेश अवास्तित्व में आया। बुध्दिमान एवं दृष्टा वह हैं जो इतिहासिक अनुभव एवं उहापोह से सबक हासिल करें। हाँ बात थी भारत के मुसलमानों में असुरक्षा की भावना

अल्पसंख्यकता अपनी चालाकी और संव्युहन से मुस्लीम अल्पसंख्यकता को अपने मायाजाल में ग्रसित करना चाहती थी।

अहमद रज़ा ने यथासमय सावधान किया वही बहुसंख्यकता, अल्पसंख्यकता का मान रख सकती है जिसमें खुदा का भय हो और ईश्वर भयता (खुदातर्सी) धर्म के साथ सच्चा प्रेम और खुदा (ईश्वर) एवं रसूल (ईश्वरदूत) की आज्ञाकारिता से पैदा होती है।

पाकिस्तान में नाम के मुसलमान सही मगर फिर भी उनके पारस्परिक सौहार्द का यह हाल हैं कि ३६ वर्ष से पाकिस्तान में ग़ैर मुस्लिम अल्पसंख्यकता चैन एवं शांति से रह रही हैं जबकि भारत में हज़ारों साम्प्रदायिक दंगे हो चुके और लाखों मुसलमान शहीद हो चुके और आये दिन होते रहते है। भारतीय मुसलमानों के सरों पर हर समय मौत के साये मंडलाते रहते हैं। मगर वह अपनी प्राकृतिक पौरुष के कारण निर्भय जीवन व्यतीत करते हैं। पौरुषता प्रसन्नचित हो।

(४)

अहमद रज़ा धर्म को राष्ट्र (कौम) की बुनियाद समझते थे। उनके विचार में धर्म (दीन) नहीं तो कुछ नहीं।

जुदा होवे सियासत से तो रह जाती है अंग्रेजी। वह धर्म के लिए प्रत्येक वस्तु न्योछावर करने के लिए तैयार थे, परन्तु धर्म को जान से लगाये रखते थे। धर्म - प्रेम सिखना हो तो उनसे सिखिए। धर्म का राज़ समझना हो तो उनसे समझिए। धर्म की समझ पैदा करनी हो तो उनके निकट आइए। वह धर्म से क्षणमात्र भी ग़ाफ़िल न थे। वह जागरुक थे। ऐसे जागरुक जिन्होंने सोए हुए राष्ट्र को जगा दिया। उनको इस्लामी सभ्यता एवं संस्कृति से प्रेम था। वह इस्लामी रंग में रंगे हुए थे और सबको इस्लामी रंग से रंगाना चाहते थे। उन्हें गैर इस्लामी सभ्यता एवं ग्रसित से नफरत थी। यह संकीर्णता नही स्वदर्शन है। जो राष्ट्र (कौमें) तुच्छतानुभूति से ग्रासित है, अपनी प्रत्येक वस्तु से नफरत, गैरों की प्रत्येक वस्तु से प्रेम ----- हाँ ऐसी राष्ट्र सभ्य नहीं सकती है। उन्नति के लिए स्वदर्शन आवश्यक है।

अहमद रज़ा सभ्यता एवं संस्कृति की हर अदा में इस्लाम की निश्बत तलाश करते थे। आज हमारा यह हाल है कि जिस वस्तु को जर्मनी, फ्रान्स, इंग्लैण्ड, जापान आदि से निस्बत हो, वह अच्छी लगती हैं। उसमें हलकी प्रेम है।

उसको प्राप्त करने के लिए दौड़-धुप है। उसको पा लेने की धुन है। काश हमारी आकांक्षाओं का यह झुकाव इस्लाम और मुहम्मद मुस्तफा सल्लल्लाहो अलैहे वसल्लम की तरफ हो जाय तो क्या बात है। हमें हर वह वस्तु अच्छी लगनी चाहिए जिसको इस्लाम और मुहम्मद मुस्तफा सल्लल्लाहो अलैहे वसल्लम से निस्वत हो। अमहद रज़ा की आकांक्षाओं की दुनिया, मुहम्मद मुस्तफा सल्लल्लाहो अलैहे वसल्लम की पवित्र ज़ात थी। उसको हर वह वस्तु पसन्द थी जो मुहम्मद मुस्तफा सल्लल्लाहो अलैहे वसल्लम को पसन्द थी। उनको हर उस वस्तु से प्रेम था जिससे मुहम्मद मुस्तफा सल्लल्लाहो अलैहे वसल्लम को मुहब्बत थी, इसी प्रेमने उन्हें अरबी भाषा से प्यार सिखाया। बह अरबी के ऐसे प्रकाण्ड साहित्यकार थे जिनका लोहा अरबवाला भी मानते थे। उन्होंने दो सौ से अधिक पुस्तकें अरबी भाषा में लिखी।

(४-१)

विज्ञान और आधुनिक विज्ञान तथा गणित में अहमद रज़ा को जो अधिकार प्राप्त था मुस्लिम यूनिव्हरसिटी अलीगढ़ के डाक्टर सर ज़ियाउद्दीन मरहूम ने स्वयं अपनी आँखों से देखकर कहा था कि "यह हस्ती नोबल पुरस्कार की अधिकारी है"। अहमद रज़ा की निपुणता का अनुमान इससे लगाया जा सकता है कि जब १९१९ ई. में सानफ्रान्सिस्को (अमेरिका) के एक ज्योतिषी ने न्युटन के आकर्षण बल के नियम के आधार पर सनयुक्त राष्ट्र अमेरिका की तबाही और विश्व के दूसरे भागों में भूकम्प और तुफानों की भविष्यवाणी की तो अहमद रज़ा ने तुरन्त उसका प्रतिउत्तर दिया और अपने अनवेषण से उसकी भविष्यवाणी को गलत करार दे दिया। यह एक बड़ी चुनौती थी जिसे अहमद रज़ा ने स्वीकार किया। जिस दिन के लिए भविष्यवाणी की गयी थी जब वह दिन आया तो कुछ न हुआ। विश्व के प्रख्यात ज्योतिषी दूरदर्षक लिए आसमान को ताकते रहे कि तबाही उपर से आनी थी अगर वह न आनी थी न आयी। पाश्चात्य देशों पर अहमद रज़ा की यह पहली सफलता थी। अहमद रज़ा ने न्युटन और आइन्स्टाईन के नियमों का खंडन किया है, उस पर आलोचना की है और अपनी विद्वत्तापूर्ण अवेषणा विश्व के समक्ष प्रस्तुत की है।

उनकी पुस्तकें 'मोईनेमोबीन', 'नाज़ुले आयते फुक़ीन', 'फौज़े मोबीन' और अल्कलेमतुलमुरुदहेमा आदि इसी प्रकार की अविषणा पर आधारित हैं। आधुनिक विज्ञान में अहमद रज़ा की कुशलता को देखकर इस्लामिया कॉलेज लाहोर के प्रधानाचार्य और प्रख्यात गणितज्ञ मौलवी हाक़िम अली अहमद रज़ा की तरफ

आकृष्ठ हुए और इतने प्रभावित हुए कि अहमद रज़ा को चौदहवी शताब्दी हिज़री का मुजाहिद (पुनर्निर्माता) करार दिया। वह अहमद रज़ा के यहाँ लाहोर से वरैली आते जाते थे और उनसे शैक्षिक आदान करते और वैज्ञानिक परीक्षण करते। आधुनिक विज्ञान में अहमद रज़ा की अरबी, फारसी और उर्दू में बहुत सी पुस्तकाएँ और हाशिए हैं। कुछ प्रकाशित भी हुए हैं। शेष सभी कलमी हैं जो विद्वानों के लिए अध्ययन योग्य हैं।

अहमद रज़ा विज्ञान को कुरआन के प्रकाश में परविन के पक्षपर थे। उनके अनुसार कुरआन मार्गदर्शक पुस्तक भी है और हिकमत का ग्रंथ भी। जिस समय संदिग्ध और प्रभावित बुध्दियाँ कुरआन में तावीलें (विस्थापन) कर कर के वैज्ञानिक नियमों को सच्चा साबित कर रही थी और कुरआन को विज्ञान के प्रकाश में देख रही थी उस समय सिर्फ और सिर्फ अहमद रज़ा ने यह उद्घोष किया कि कुरआन के प्रकाश में विज्ञान को परखो। यह बात आवेशात्मक नहीं तार्किक है। कुरआनी नियम मौलिक हैं, प्रगतिशील नहीं। विज्ञान के नियम प्रभावी और प्रगतिशील हैं। आज जो प्रमाणित किया जाता है कल उसको वैज्ञानिक स्वयं गलत करार दे देते हैं। जो वस्तु संभावी हो उसको आवश्यव्यापी और मौलिक नहीं कह सकते।

अहमद रज़ा का कहना था कि सलावी विचार मौलिक विचार के प्रकाश में परखो और परीक्षण करो। जिस तरफ अहमद रज़ा ने ध्यान आकृष्ट किया वह स्वयं वैज्ञानिकों के लिए लाभदायक थी। भूत से वर्तमान में लाभ उठाना बुध्दिमानी है। मगर इल्मी हल्को में भेदभाव और संकीर्णता ने वर्तमान को भूत (माजी) से वंचित रखा। कुरआन को परिवर्तित इंजील पर कयास किया और विश्व के बुध्दिजीवी एक बड़ी दौलत से वंचित रहे।

(४ - २)

अहमद रज़ा विज्ञान और गणित में महारत के साथ साथ एक महान कवि (शायर) भी थे। यह बहुत अत्तंत अश्चर्यजनक है। इसी लिए अज़हर विश्वविद्यालय काहेरा के प्रोफेसर मोहिउद्दीन अल्वाई ने जो अब मदीना युनिव्हरसिटी में यह कहा था "प्राचीन कहावत है कि शैक्षिक गवेशणाए और सुकुमार भावनाऐं एकत्र नहीं हो सकती मगर अहमद रज़ा ने इस कहावत को गलत सिद्ध कर के दिखा दिया"। अहमद रज़ा का काव्य "हदाय क़े बाख्शिश" देखिये फिर प्राचीन दर्शन (फलसफा) पर अल्कलेमतुलमुल्हेमा पढ़िए। आधुनिक दर्शन पर "फौज़े मोबीन" का अध्ययन

किजिए। इनकी धर्मशास्त्र (फेकहे हनफी) में धर्मशास्त्र फताबाए -- रिज़विया देखिए हर जगह एक नया हतय नज़र आता है। कहीं वह श्रेष्ठ कवि नज़र आते हैं कहीं दृष्टा दार्शनिक और कहीं अद्वितीय मुफ्ती और धर्माचार्य हर कला विज्ञान में उनका यही हाल है।

उर्दू तो उनकी अपनी भाषा थी, इस भाषा में उनका अश्वलेखनी हर विषय और हर फन में ऐसा दौड़ता है कि, कंचित ही उनके समकालीन उलमा में कोई ऐसा आलिम पेश नहीं किया जा सकता जिसको उर्दू या ऐसा अधिकार प्राप्त हो। अरबी व फारसी की बात तो अलग रही। मौलाना हसरत मोहानी जैसा महान कवि उनकी कविताएँ पढ़ा करता था। और मिर्ज़ा दांग़ जैसा भाषाविद् उनकी कविताओं की प्रशंसा करता उनका "क़सीदए मेराजिया" विद्वानों की दृष्टी में पूरी उर्दू शायरी पर भारी है। पढ़ते जाइए, सर धुनते जाइए। कौसरों तस्नीम की धुली हुई ज़बान में यह क़सीदा लिखा है। उनका एक क़सीदा सिन्ध युनिव्हरसिटी पाकिस्तान के एम्. ए. (उर्दू) के कोर्स में भी शामिल है।

उर्दू तो उनकी अपनी ज़बान थी, उसमें कमाल हासिल करना इतना बड़ा कमाल न था जितना अरबी और फारसी में ऐसा कमाल हासिल करना कि खुद अहले ज़बान (भाषावेत्ता) हैरान रह जाँय। अरबी गद्य और पद्य में अहमद रज़ा की महारत को देखकर अरब के उलमा ने कहा कि उनके सामने अरब का भाषाविद् सहबान बिन वायल भी बेज़बान है। उससे बढ़कर और क्या तारीफ होगी।

भारत - पाक की सरजमीन में आरबी भाषा के ऐसे विद्वान कंचित ही पैदा हुए हैं। किसी ज़बान में बोल लेना और लिख लेना कमाल नहीं। कमाल वह है कि इस तरह बोले और लिखे कि स्वयं भाषाविद् प्रशंसा कर उठें। यह महारत भाषाविदों के साथ मुद्दतों संगत के बाद पैदा होता है। वास्तविकता तो यह है कि यह कमाल इश्के मुस्तफा के तुफेल हासिल हुआ। हदीस में आया है कि जब कोई एखलास (सच्ची भावना से) अमल (अच्छे काम) करता है तो उसके दिल में हिकमत के स्त्रोत फूटने लगते हैं। अहमद रज़ा के विशुद्द कार्य ने उनके दिल को विद्या भण्डार बना दिया। वह नबी के निदेशों के सजीव चमत्कार थे। हदीसें पढ़ते जाईए, अहमद रज़ा को देखते जाइए।

पाकिस्तान के एक मोहक़िक़ भारत - पाक की अरबी नातिया सायरी पर डाक्टरेट कर रहें हैं। उन्होंने अपने मकाले में अहमद रज़ा के कमालाते शायरी को बयान किया है और शायरी का नमुना पेश किया है। अहमद रज़ा का

इन्तेकाल किए ७२ वर्ष गुज़र चुके हैं। उनके जानशीन, उनके प्रौत्र अल्लामा अख्तर रज़ा खाँ अजहरी हैं। बड़े पुत्र की और आलिमे बाअलमन १९८३ ई. में पाकिस्तान तशरिफ लाए। अज़राहे कल गरीब खाने पर ठठ भी तशरीफ लाए। एक अरबी नात की फरमाइश की। कलमबरदाश्ता उसी समय लिख दी। इससे अन्दाजा होता है कि अरबी ज़बान ने अहमद रज़ा के घराने में घर कर रखा है। यह इस घराने की विशेषता है।

(४ - ३)

अरबी और फारसी मुसलमानों की तहज़ीबी ज़बाने हैं। १८५७ ई. में क्रान्ति के पश्चात सरज़मीने पाक व हिन्द में इन ज़बानों का भविष्य खतरे में पड़ चुका था।तसनीफो - तालिफ (लेखन - सम्पादन) का सिलसिला नाममात्र रह गया था। अहमद रज़ा ने सन १८६८ ई. से उन ज़बानों में जिस शिघ्रता लेखन के तहकीक का सिलसिला आरम्भ किया वह आश्चर्यजनक है। अफसोस उनकी अरबी व फारसी रचनाएँ अब तक प्रकाशित न हो सकी। एक - दो किताबें तुर्की से और चन्द किताबे भारत व पाक से प्रकाशित हुई हैं। लेकिन अभी एक बहुत बड़ा भण्ड़ार अप्रकाशित है। धर्मशास्त्र (फिक़्ह) की प्रसिध्द पुस्तक शामी पर उनके विस्तृत हवाशी "जदुलमुम्तार" हैदराबाद दकन में छप कर " अल्मजमउल इस्लामी " से प्रकाशित हो चुके हैं। यह ख्वाहिश उलमा और धर्माकार्यो के लिए अध्ययन योग्य हैं। अहमद रज़ा ने अरबी और फारसी में २०० से अधिक किताबें यादगार छोड़ी हैं। उनकी इल्मी प्रयास उनके युग के सारे कलमी संस्थाओं के प्रयासों पर भारी नज़र आती हैं। यह अतिशयोक्ति नहीं जो परखेगा, ताईद करेगा।

अहमद रज़ा ने मंज़रे इस्लाम के नाम से एक मदरसा स्थापित किया जो कई एतेबार से अति उत्तम मदरसा था। पहली बात तो यह कि उसमें ऐसा प्रकाण्ड विद्वान शिक्षा देता था जिसकी मिसाल इस्लामी दुनिया में न थी। दूसरी बात यह कि यहाँ के छात्र जो भारत - पाक के कोने - कोने और विदेशों से आते थे अन्य विद्यालयों के छात्रों से श्रेष्ठ थे। अहमद रज़ा अपनी जेबे खास से उनके लिए खास एहतेमाम करता। कैलीफोर्निया युनिव्हरसिटी (अमेरिका) के एक विदुषी ने लिखा है कि अहमद रज़ा ईद, बकरईद पर छात्रों के लिए नए नए खाने पकवाते। उनके दिल पसन्द और मरग़ूब खाने खिला खिला कर खुश होते। वह अपने छात्रों को यतिमों की तरह नहीं पालते थे बल्कि बेटों की तरह उनका पालन - पोषण करते थे।

उनका मदरसा खाने कमाने का साधन न था। बल्कि इल्मी फज्ल का सरचश्मा था। अहमद रज़ा से न केवल छात्र बल्कि उलमा भी लाभान्वित होते थे। कुछ उलमा रुस, सउदी अरब और भारत-पाक वगैरह से आए। हर मैन शरीफैन के कयाम के जमाने में उल्मा ने उनके सामने इस्तिफ्ता (प्रश्नावली) पेश किया और अहमद रज़ा ने अरबी ज़बान में ऐसा विद्वत्तापूर्ण जवाब दिया जिस को पढ़कर उल्माये हरमैन के उल्मा चकित रह गये।

(५ - १)

अहमद रज़ा एक आर्थिक और वित्तीय प्रोग्राम रखते थे। उनके अनुसार माल व दौलत ही अर्थशास्त्र की परिधि में नही आते बल्कि समय भी एक महान दौलत है और अपनी आर्थिक महत्व रखती है। समय एक अमुल्य मोहलत है जिसने वक्त की कद्र की, वक्त ने उसकी कद्र की। जिसने वक्त को बर्बाद किया, वक्त ने उसको बर्बाद किया। वक्त की कद्र सीखनी हो तो अहमद रज़ा से सिखिए। जिन्होंने जीवन का एक क्षण नही गँवाया। उन्होंने एक-एक क्षण से फ़ायदा उठाया। वह वाणी और आचरण दोनों के धनी थे। उन्होंने ज़बान और कलम की ऊर्जा को नष्ट नहीं किया। लिखने व तसनीफ के कृतियों का यह हाल कि लिखते लिखते सुबह से दोपहर हो जाती, दोपहर से शाम, साम से रात और कभी कभी रात से सुबह। जब लिखने पर आते लिखते चले जाते। चार आदमी मुसव्वेदों को साफ करते जाते।

अहमद रज़ा की सोच और लिखने का यह हाल कि नकल करते करते यह चारों आजिज़ होते और छटा पृष्ट तैयार हो जाता। यही कारण है कि अहमद रज़ा ने अपनी कृतियाँ, हाशिए और व्याख्याओं का एक महान भण्डार छोड़ा है। इस विशेषता में उनके समकालीनों में उनका समतुल्य कोई नज़र नही आता। कुछ लोग उनके मुक़ाबिल एक आलिम को करते है, उसकी कृतियों की केवल संख्या बताते है, कृतियों का नाम व निशान बताने से हिचकिचाते है। अफसोस यह विद्वान भी झूठ से नही बचते और मिथ्यावाद को प्राश्रय देते हैं। हाँ तो चर्चा था अहमद रज़ा का। अहमद रज़ा ने अपने कार्यों से बताया कि वक्त कितना बहुमूल्य है। अगर उसको ढ़ंग से खर्च किया जाय तो एक इन्सान एक वर्ग का काम कर सकता है। स्वयं तो बनता ही है, हज़ारों को बना जाता है।

(५ - १ - अ)

राष्ट्रीय अर्थ - व्यवस्था में अहमद रज़ा ने कर्ज़ लेने की आदत को अति निन्दनीय करार दिया। यह आदत व्यक्ति में हो या वर्ग और शासन में। कर्ज़ की आदत व्यक्ति तथा वर्ग से आत्मविश्वास, आत्मसम्मान व ग़ैरत की दौलत छीन लेती है। निहित योग्यताएँ मुर्दा होकर रह जाती हैं। कार्यक्षमता नष्ट होने लगती है। सजीव राष्ट्र कर्ज़ लेकर सूद दर में सूद के बन्धनों में नही वंधा करते। वे कर्ज़ दिया करते है, लिया नहीं करते। अहमद रज़ा को मुहम्मद मुस्तफा सल्लल्लाहो अलैहे वसल्लम का यह उपदेश याद था, "उपरवाला हाथ, नीचे वाले हाथ से वेहतर है"। अर्थात देने वाला हाथ, लेने वाले हाथ से बेहतर है। जिन राष्ट्रों ने इस हदीस पर अमल किया उन्होंने आर्थिक सुदृढ़ता प्राप्त की।

दूर क्यों जायें चीन ने संकल्प किया कि वह किसी से कर्ज़ न लेगा। फिर देखिए वह कहाँ से कहाँ जा पहुँचा। कर्ज़ लेने वाले उसकी प्राकाष्ठा को देख देख कर आश्चर्य चकित हैं। मगर आश्चर्य की कोई बात नहीं। बात ओसूल की और ओसूल पर चलने की है। भारत के मुसलमानों की बड़ी संख्या हिन्दुओं की ऋणी थी। सूद दर सूद के बोझ तले दबी जा रही थी। जायदादें और जमीनें नीलाम हो रही थी। सम्पन्न परिवार धीरे धीरे कंगाल होते जा रहे थे। अहमद रज़ा ने इस ऋण के विरुध्द आवाज़ उठायी और उसके कारणों को दूर करने के लिए बहुत ही लाभदायक प्रोग्राम राष्ट्र के सामने प्रस्तुत किया। उन्होंने मुसलमानों को आत्मविश्वास और आत्मदर्शन का पाठ पढ़ाया।

(५ - १ - ब)

अहमद रज़ा इस बात के भी विरोधी थे कि कोई राष्ट्र अपने देश का कच्चा माल दूसरे देशों को कौड़ियों के मोल दे और फिर स्वयं ही तैयार माल चाँदी के मोल खरीदे। एक देश कच्चा लोहा निर्यात करता है। दो - तीन तोले लोहे का क्या मुल्य। लेकिन वही लोहा घड़ी के रुप में आयात किया जाता है तो चाँदी और सोने के मोल खरीदा जाता है। अतः अहमद रज़ा का कहना था कि कच्चे माल की तैयारी के लिए देश में कारखाने लगाए जाय और व्यक्तियों के श्रम से इस कच्चे माल में जिन्दगी पैदा की जाय और पुनः यह सोने चाँदी के मोल निर्यात किया जाय। उनके अनुसार जो देश अपने कच्चे माल की निर्यात करता है वह दूरदर्शी नहीं है।

(५ - १ - ज)

अहमद रज़ा आय - व्यय में सामंजस्य रखते बल्कि आय बढ़ाने और खर्च घटाने के समर्थक थे ताकि व्यक्ति और वर्ग दोनों आर्थिक रुप से शुध्द हो। राजनैतिक शुध्दता आर्थिक शुध्दता पर निर्भर है। इसलिए वर्तमान राजनिति अर्थ व्यवस्था का परिनयण करती हैं। महत्वपूर्ण प्रश्न आप का है और इससे महत्वपूर्ण व्यय का। कमाने में देर लगती है खर्च करने में कुछ देर नहीं लगती। इसलिए खर्च करने के लिए अधिक बुध्दिमानी और सतर्कता की आवश्यकता है। आज हमारे मस्तिश्क में फ़ज़ूल खर्ची ने जगह कर ली है बल्कि अनावश्यक खर्च करने की आदत हो गयी है जो फ़ुज़ूल खर्ची से ज्यादा खतरनाक है। नाम और ख्याति की अबिलाषा, शान व शौकत का प्रदर्शन। हमारी कुंठ विचार धारा है कि सभ्यवतः हमारे भव्य भवन, महल, बहुमूल्य वस्त्र, व्सादिष्ट खाद्यपदार्थ एवं पेय पदार्थ, लम्बी चौड़ी मोटरें और कारें देखकर दूसरे लोग प्रभावित हो सकें।

नहीं नहीं वास्तविक महानता और सच्ची भव्यता का इन चीज़ों से दूर का भी सम्बन्ध नहीं। वास्तविक महानता और सच्ची भव्यता तो मानव के अपने चरित्र एवं व्यक्तित्व से सम्बन्धित है। शुध्द, स्वच्छ और किर्तीमान एवं ओजस्वी हो तो यह घर बैठ कर भी विश्ववासियों के दिलों पर हुकूमत की जा सकती है, बल्कि भूआसीनता से वह प्राक्रम उत्पन्न होता है जो सिंहासन पर बैठने वालों को प्राप्त नहीं। सच कहा है, खुब कहा है --

ज़ाहिर में ग़रीबुल गोरबा फिर भी ये आलम
शाहों से सिवा सुतुबते सुल्ताने मदीना

धर्मशास्त्र (शरीयत) ने अतिव्ययता को सख्ती से मना किया है। यानी ज़रुरत के वक्त धार्मिक नियमों को सिमा से अधिक व्यय करना और बेजा खर्च करना। इस्लाम ने फ़जूल खर्च करने वाले को शैतान का भाई कहा है। इसीसे इस नवनिता (विदआत) की विनाशकारिता का अनुमान लगाया जा सकता है। जिस व्यक्ति और वर्ग ने अतिव्ययता के इस गुर को पा लिया वह कभी मुहताज़ नहीं हो सकती।

अहमद रज़ा ने भारत - पाक के मुसलमानों को विशेष रुप से इन बुरी आदतों की विनाशकारिता से सचेत किया। उन्होंने अपनी कार्यप्रणाली का एक आदर्श प्रस्तुत किया। उनकी मितव्ययता और सावधानी की यह दशा थी कि बचा हुआ जुठा पानी भी फैंकना गवारा न था और दान एवं परोपकार की यह दशा कि

यह दशा कि जो कुछ होता ग़रीबों की सहायता के लिए खर्च कर दिया जाता, धार्मिक कार्यों में लगा दिया जाता। जीवन पर्यन्त कभी इतना रुपया न बचाया कि ज़कात फ़र्ज़ हो जाती।

(५ - १ - ह)

रुपये पैसे के सम्बन्ध में अहमद रज़ा अत्यान्त सावधान थे। चाहे वह पैसा नज़्र के रुप में आता या चन्दे की सूरत में आता। अहमद रज़ा ने कभी नज़्र न माँगी कि नज़्र स्वयं पेश की जाती है, माँगी नही जाती। जो माँगी जाय या जिसकी इच्छा की जाय वह नज़्र नही, भिक्षा है या मज़दूरी या जुर्माना। कोई स्वतः नज़्र देता, स्वीकार कर लेते कि सरकारे दो आलम सल्लल्लाहो अलैहे वसल्लम ने नज़्र स्वीकार करने का हुक्म फ़रमाया है। अगर जब नज़्र बदले के रुप में दी जाती तुरन्त लौटा देते कि हज़रते अम्बिया और अल्लाह वालों ने धर्म की सेवा के लिए कभी मज़दूरी नहीं ली। और हाँ नज़्र का यह पैसा कभी अपनी ज़ात या परिवार पर व्यय नहीं किया। यह पैसा अन्य धार्मिक कार्यों में लगाया। अल्लाह रे इहतियात।

यही हाल चन्दे का था। दारुल ओलूम मंज़रे इस्लाम के जिस जमाने में वह स्वयं प्रबंधक थे, चन्दा उनके नाम से आता। एक एक के पाई का हिसाब रखा जाता। जब कार्य बाहुल्य के कारण दारुल ओलूम का प्रबंध मुश्किल हो गया तो अपने बेटे मौलाना हामिद रज़ा खाँ साहब को प्रबंधक बना दिया जो एक महान विद्वान और आरिफे कामिल थे। अहमद रज़ा ने यह गवारा न किया कि वह प्रबंधक बने रहे, चन्दा उनके नाम से आता रहे और प्रबंध कोई और करे। जब तक वह खुद पैसे की देखभाल कर सकें चन्दा की जिम्मेदारी उठायी, जब मजबूर एवं व्यस्त हो गये यह जिम्मेदारी अपने सुपुत्र को सौंप दी।

राजनैतिक आन्दोलनों में तो हज़ारों इधर से उधर होते हैं। जाता किसी और के लिए है, खर्च कहीं और किया जाता है। जब खिलाफ़त तहरीक (आन्दोलन) चली और चन्दों की गर्मबाज़ारी हुई तो अहमद रज़ा ने उसी वक्त ताड़ लिया कि खिलाफ़त के नाम यह किया जा रहा है, मनमानी मदों में खर्च किया जा रहा है। उन्होंने उस वक्त पर टोका। मगर खाने वाले किसकी सुनते है? मगर उनके अन्देशे सही साबित हुए। हाल ही में अल्लामा नूर अहमद कादिरी के अविशनात्मक निबंधों (तहक़ीकी मक़ालात) का संग्रह नज़र से गुज़रा जिसमें उन्होंने प्रमाणों से यह साबित किया है कि तहरीके खिलाफत में एकत्र होने वाले हज़ारों - लाखों रुपये

काँग्रेस के काम आए।

अहमद रज़ा सही कहते थे कि खिलाफ़त का पर्दा है, काम कुछ और हो रहा है। मगर ग़ैरों ने निन्दा की। अपनी बदगुमानियों और ग़लतफहमियों में मुबतेला हो गये। अहमद रज़ा की बात समझ में न आती थी। जोशेजुनूँ (दम्म) में लोग आपे से आपे हो रहे थे। राजनैतिक क्षेत्र के जादूगरों ने ऐसा जादू किया कि अच्छे अच्छों की अक्ले जवाब दे गई। मगर एक अहमद रज़ा थे जिन पर किसी का जादू न चला।

(५ - २)

अहमद रज़ा का व्यक्तित्व ऐसा सक्रिय एवं कार्यशील था कि भारत - पाक के कोने कोने में उनको महसूस किया गया और चलने वाले उनके पद - चिन्हों पर चलने लगे। भारत - पाक के लगभग हर सुबे में अहमद रज़ा की प्रतिध्वनी सुनी गई।

पाकिस्तान के सूबा सिन्ध, सूबा पंजाब, सूबा सरध्द वग़ैरह में हमेशा उनके नाम लिवा जा रहे। सिन्धी विद्वानों और बुध्दिजीवियों ने स्वयं अहमद रज़ा की जिन्दगी में और उनके मरने के बाद उनकी ख़िदमात को सराहा और खिराजे अकीदत पेश किया। हरमैन शरीफैन के एक महाजिर सिन्धी आलिम ने अहमद रज़ा को चौदहवी सदी का मुजद्दिद नव निर्माता करार दिाय। सिन्ध के प्रसिध्द अदीब (साहित्यकार) व शायर जनाब शरसार ओली मरहूम ने अहमद रज़ा के निधन पर अपने एक निबन्ध में श्रध्दांजली आर्पित की। प्रोफेसर सैय्यद मुहम्मद आरिफ़ ने अपने एक निबंध में सरजमीने सिंध्द में अहमद रज़ा की लोकप्रियता का निरीक्षण किया है। सिन्ध के एक आलिम मौलाना अहमद अब्दूल करीम दर्स (मदरसा दर्सिया, कराची) से अहमद रज़ा के विशेष सम्बन्ध थे। इसी सम्बन्ध की वजह से अहमद रज़ा कराची तशरीफ़ लाए। पंजाब के जनसामान्य एवं विशिष्ट अहमद रज़ा की जिन्दगी से उनके प्रशंसक बल्कि प्रेमी हैं। डा. मुहम्मद इक़बाल ने एक मजलिस में अहमद रज़ा से मुलाकात की और उनको अपनी कविताएँ भी सुनाई। प्रोफेसर मोलवी हाकिम अली (प्रिन्सीपल इस्लामिया कालेज, लाहोर) तो अहमद रज़ा के सच्चे प्रेमी थे और उनको चौदहवी शताब्दी का नवनिर्माता कहते थे। अहमद रज़ा के खलिफा मौलाना दीदार अली ने लाहोर में एक मदरसा स्थापित किया और मस्जिद वज़ीर खाँ में इमामत व ख़िताबत के कर्तव्य अन्जाम दिए।

मौलाना अहमद बख्श साहब ने अपने अरबी कसिदे (स्तुति) पर अहमद रज़ा से इस्लाह ली। यह विस्तृत स्तुति लेखक के पास सुरक्षित है। मौलाना का सम्बन्ध डेरा ग़ाज़ी खाँ से था। इसी प्रकार और बहुत से उदाहरण हैं जिनपर एक पूर्णरुपेन निबन्ध लिखा जा सकता है।

सरहद वाले भी अहमद रज़ा के फैज़ से महरुम न रहे। खलीफ़ा मौलाना शाह अब्दूल क़ादिर बदायूनी, मौलाना उमरुद्दीन हज़ाखी के अहमद रज़ा से विशेष सम्बन्ध थे। सरहद से छात्र दारुल ओलूम मंज़रे इस्लाम में पढ़ने जाते थे। मौलाना मुहम्मद अमीर शाह गीलानी (उनका साया दराज़ हो) ने अपनी पुस्तक "तज़केरए उल्मा व मशायखे सरहद" में ऐसे उल्मा का ज़िक्र किया है जिसका सम्बन्ध अहमद रज़ा या उनके दारुल ओलूम से रहा है।

पेशावर के मौलाना मोहम्मद ज़कीरया देवबन्दी का विचार था कि अगर अहमद रज़ा न होते तो भारत-पाक से हनफ़ियत (हनफी विचार धारा) समाप्त हो चुकी होती। विशेष्य के पास अहमद रज़ा का प्रख्यात फ़तावा रिज़विया भी था जो उन्होंने मौलाना मुहम्मद अमीर शाह गीलानी को प्रदान किया था। पेशावर के एक बुज़ुर्ग मौलाना ताज मुहम्मद सिद्दीक़ी अलक़ादरी के पुस्तकालय से लेखक को अहमद रज़ा की बहुत सी कृतियाँ मिली जिससे अन्दाजा होता है कि सरहद के लोग अहमद रज़ा की कृतियाँ से परिचित थे।

सुबा सरहद से तो अहमद रज़ा का एक और भी सम्बन्ध था और वह यह कि उनके पुर्वजों का सम्बन्ध क़न्धार के एक खानदान से था, अर्थात अहमद रज़ा के पूर्वज सरहद के पड़ोसी थे, बल्कि उस ज़माने में तो सरहद भी देहली के सूबा काबुल में शामिलित होगा। इसी सम्बन्ध की वजह से काबुल युनिव्हरसिटी के प्रोफेसर अब्दुशसकूर खाँ 'शाद' ने लिखा है कि अहमद रज़ा के जीवन और कृतित्व से सम्बन्धित पूर्ण जानकारी आरियाना दायरतुल मआरिफ में शामिल कर लेनी चाहिए।

वस्तुतः अहमद रज़ा जिस प्रकार भारत के सूबों में प्रसिध्द एवं लोकप्रिय थे उसी प्रकार पाकिस्तान के सूबों में भी प्रसिध्द एवं लोकप्रिय थे। न सिर्फ भारत-पाक बल्कि इस्लामी विश्व में उनका चर्चा था। जिसका अन्दाजा, "इमाम अहमद रज़ा और आलमे इस्लाम" के अध्ययन से होगा। यह पुस्तक निकट भविष्य में पाकिस्तान से प्रकाशित होने वाली है।

(६ - १)

ज़माना करवटे बदलते रहता है। सन १९२० ई. में एक राजनैतिक इन्क़लाब आया और भारत - पाक के हालात भी कुछ बदले। मुसलमानों में वैचारिक और दृष्टिगत परिवर्तन हुए लेकिन डा. शैख मुहम्मद इकराम के कथानुसार मुस्लिम जनमानस पर अहमद रज़ा का प्रभाव रहा। लेकिन एक वर्ग राजनैतिक एवं दृष्टिगत भिन्नता के आधार पर अहमद रज़ा का विरोधी हो गया और प्रतिशोध के दर पे। चुनांचे मकरुह प्रोपेगंड़े से अहमद रज़ा के विरुध्द चरित्र - बध की जबरदस्त अभियान चलाया जिसका प्रभाव अर्धशताब्दी तक बाकी रहा और अहले इल्म यह समझते रहे कि जो कुछ कहा जा रहा है सम्भवतः यही सही है। इस प्रकार वर्षों अहले इल्म की आँखों से अहमद रज़ा का व्यक्तित्व छुपा रहा।

अहमद रज़ा पर एक आरोप यह लगाया कि उसने मिल्लत को गिरोहों में विभाजित कर दिया। चुनांचे हकीम अब्दुलहई रायबरैलबी के सुपुत्र अली मियाँ नदबी ने "नुज्हतुल ख्वातिर" के अन्तिम भाग में जहाँ अहमद रज़ा को दिल खोल कर प्रशंशा की है वहां यह भी लिखा है कि मिल्लत में मतभेद उसने पैदा किया और मिल्लता कि बुनियाद डाली।

एक आरोप यह भी लगाया गया कि अहमद रज़ा ने किसी नये अक़ीदे और विचार धारा की बुनियाद डाली। लेकिन वास्तविकता यह है कि अहमद रज़ा ने न किसी अक़िदे की बुनियाद डाली और न किसी विचार धारा की।

हाँ प्राचीन अक़ीदों और सच्ची विचार धारा को जीवित अवश्य किया। सन १८५७ ई. की क्रान्ती से कुछ पहले और बाद इन अक़ीदों और विचार धारा को समाप्त करने के प्रयास आरम्भ हो चुके थे। अंग्रेज ने मुसलमानों से हुकूमत छीनी। उसने देखा कि कुरआन की मुहब्बत, हुज़ूर सल्लल्लाहो अलैहे वसल्लम के प्रति प्रेम और अल्लाह वालों की अकीदत एवं मुहब्बत मुसलमानों की शक्ति का राज़ है। अतः उसी जमाने में कुछ ऐसी तफसीरें लिखी गयी कि ईमान डाँबाडोल होने लगा। हज़ूर सल्लल्लाहो अलैहे वसल्लम के व्यक्तित्व और विशिष्टताओं को तर्क - बितर्क का विषय बना कर स्नेह व प्रेम को क्षीण किया गया। अम्बिया और अल्लाह वालों को अल्लाह का अक्षम बन्दा बनाकर मुसलमानों को उससे विमुक्त किया गया और उस पंक्ति में खड़ा कर दिया जहाँ इब्लीस ने आदम के सम्मान में इन्कार किया था · ऐसे ऐसे फतवे (धर्मादेश) लिखे गये कि अतीत एवं वर्तमान के उल्मा काफिर

एवं मुश्रिक करार पाये। हालांकि उन महानुभावो के वही अकीदे (अस्थाए) थे जिन का शताब्दियों से मुसलमान बहुसंख्यकता अनुसरण कर रही थी। नहरें और नदी, नाले, दरिया से निकलते है। दरिया को कोई नदी, नाला नहीं कहता, सितमज़रोफ़ी यह हुई की दरिया को नदी - नाला कहा जाने लगा और नदी को दरया। ग़ौर करेंगे तो मालूम होगा कि इस समय हमारे सामने जो फिरक़े मौजूद है उनमें अधिकांश बल्कि एक, दो के सिवा सब सन १८५७ ई. की क्रान्ति के बाद की पैदावार है। *गुलामी में बदल जाता है क़ौमों का ज़मीर।*

(६ - २)

ईमाम अहमद रज़ा ने किसी जमाअत से हटकर की कोई नया फिर्का नही बताया। उनकी खोज़पूर्ण कृतियाँ देखिए वह वहीं बात कहते है जो कुरआन एवं हदीस से साबित है। सच्ची सच्ची बातें कहते हैं। कांट - छांट नही करते। कुछ दिखाते और कुछ छुपाते नहीं। कुरआन एवं हदीस से तो और भी कहते है मगर अन्तर यह है कि वह अपनी बात को कुरआन एवं हदीस से साबित करने की कोशिश करते है और अहमद रज़ा सिर्फ कुरआन एवं हदीस की बातें करते है। अपनी मन की बातें उसमें नही मिलाते। खूब ग़ौर करें मालूम होगा कि जिस वक्त सवाद आज़म मतभेत का शिकार था, मिल्लत को शर्तों में बांटा जा रहा था, अहमद रज़ा वही मर्दे बुजाहिद थे जिन्होंने मिल्लत को छिन्न - भिन्न और टुकड़ों में बँटने से बचाया और सत्यता को प्रकट किया यह अन्याय है कि जिसने वर्गीकरण के विरुध्द महान संघर्ष किया उसको साम्प्रदायिक एवं साम्प्रदायिकवादी कहा गया।

ईमाम अहमद रज़ा वही अक़ीदें (आस्थायें) एवं विचार धारा प्रस्तुत की जो हर युग और हर काल में प्रस्तुत की गयी। वह आस्थाएँ एवं विचार धाराएँ दासताकालीन यादगार न थी बल्कि स्वतंत्रता कालीन यादगार थी। वह अरब एवं अजम (गैर अरब) में सुप्रसिध्द एवं विख्यात थे। अहमद रज़ा की वेदना स्वाबाविक वेदना थी। क्योंकि हर नया फिर्का (सम्प्रदाय) सवादे आज़म अहले सुन्नत से ही व्यक्तिगत शक्ति प्राप्त कर रहा था। स्वयं उनके यहां क्या था? अहमद रज़ा वही बात कही और वही सन्देश दिया जो सताब्दियों से दिया जाता रहा था, जिसको भुलने वाले भुल गये थे, जिसको भुलने वाले भुला रहे थे। अहमद रज़ा ने भूली बातों को याद दिलाया और बताया हमारे असलाफ (मनीषी)ा किस तरह अमल करते थे। उनकी सोच का अन्दाज़ क्या था। उनके अमल का अन्दाज़ क्या था।

ईमाम अहमद रज़ा ने आफाक़ियत (सार्वभौमिकता) के लिए प्रयत्न किया। यद्यपि उनको सार्वभौमिक संदेश "बरैलवियत" के नाम से जाना पहचाना गया, यह इसलिए कि अहमद रज़ा अहले सुन्नत का निशान बन गये। अहमद रज़ा अहलेसुन्नत का संकेत बन गए। अहमद रज़ा बरैली के रहने वाले थे इसलिए उनके सार्वभौमिक सन्देश को बरैली से सम्बन्धित किया जाने लगा और बरैलवियत की संज्ञा दी जाने लगी। दुनिया में ऐसे लाखों - करोड़ो सुन्नी बसते हैं जो बरैलवियत की शब्दावली एक से परिचित नहीं मगर आस्थाएँ वही रखते हैं जिनका प्रचार एवं प्रसार अहमद रज़ा ने किया। भारत - पाक में लाखों ऐसे मुसलमान रहते हैं जो स्वयं अपने को बरैलकी नहीं कहते लेकिन जब उनकी आस्था एवं विचार धारा का अध्ययन करेंगे तो अहमद रज़ा का समर्थक पायेंगे। तो वास्तव में "बरैलवियत" सार्वभौमिकता (आफाकियत) का दुसरा नाम है।

अहमद रज़ा से पहले भी यह आस्था एवं विचार धारा थी। उस समय भी "बरैलवियत" की शब्दावली किसी के मन मश्तिश्क में न आई होगी। अहमद रज़ा ने किसी नए अकीदे (आस्था) एवं विचार धारा की बुनियाद नहीं रखी, बल्कि सलफे सालेहीन (सिध्द मनीवियों) के मसलक (पेल) और उनकी आस्थाएँ और विचार धाराएँ को जिवदान किया। इसी लिए आपको अरब व अजम के इल्म ने चौदहवी सदी हिज़री का नव निर्माता माना है।

(६ - ३)

सोचने की बात है क्या चौदह सौ वर्ष से दीन (धर्म) को जिस तरह समझा गया वह सही न था ? क्या इतनी अक्ले किसि गलत खयाल पर जम सकती है ? क्या इतने उलपाव इमाम के कदम किसी गलत रास्ते पर चल सकते हैं ? यह बात समझ में नहीं आती। फिर अक़्लें भी रौशन और उज्वल और कदम भी मुबारक व पवित्र। क्या इस शताब्दी के नये नये ख्याल और नयी नयी सोच रखने राले दीन को सही तौर पर समझे, इससे पहले और कोई न समझा ? यह बात समझ से परे वाला तर है। हाँ हक वही हैं जो बराबर एक तरह चला आ रहा है। सच वही है जो सदियों से एकसा चला आ रहा है। अहमद रज़ा ने यही सच पेश किया जिसको छुपाया जा रहा था, जिसको दबाया जा रहा था। समझनेवाले उनको समझे हुए थे, परखने वाले उनको परखे हुए थे। मगर नाम ज़ुबानों पर आते आते रुक जाता था। मकरुह प्रोपगंडे की मोटी तहों में हक़ीक़त गुम हो चुकी थी।मगर दिलों में याद मौजूद थी : दिमागों में बात सुरक्षित थी ; अगर ऐसा न होता

तो गर्द व ग़ुबार साफ होते ही यूँही सब उनके गुन न गाने लगते। कोई अचानक यूँ अच्छा नहीं हो जाता। व्यक्तित्व को जाँचने और परखने के लिए एक ज़माना चाहिए। मगर यहां हालत यह है कि जब मसले का जाल छिन्न - भिन्न हुआ, वास्तविकता सामने आयी। अहले इल्म (विद्वान) युँ बोल उठे मानो दबीस्तान (विद्यालय) खुल गया। एक वह जमाना था जब किसी इल्मी मजलिस में अहमद रज़ा का नाम लेना भी गवारा न था, काम करना तो दूर की बात है, और एक यह जमाना है कि विद्वान, साहित्यकार, कवि, बुध्दिजीवी, डाक्टर, प्रोफेसर, इतिहासकार, अनविषण, कमान्डर, जज और वज़ीर (मंत्री) जो है उनकी प्रशंसा में तल्लीन हैं।

देखते देखते इन महानुभावों की अनुभुती का एक महान भण्ड़ार सामने आया। अब तक उन अनुभुतियों पर आधारित आठ पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं। एक अरबी में, शेष उर्दू में। इससे अनुमान लगाया जा सकता है कितने लोगों ने अहमद रज़ा को श्रध्दांजली अर्पित की होगी और अभी बहुतसी अनुभूतियाँ. (तअस्सुरात) प्रकाशन की प्रतिक्षा में है और बहुतसी धीरे धीरे छापने आती जा रही हैं। मालूम होता है कि विरोधियों के परोपगेंड़ों ने विद्वानों की ज़ुबाने बन्द कर रखी थी, मगर दिल मचल रहे थे। अब तड़प तड़प कर जजबात व खयालात बाहर आ रहें हैं। एक सैलाब (जल - प्रवाह) है जो थमाए नहीं थमाता। एक तूफान हैं जो रोके नहीं रुकता। बाँध बाँधनेवालों के हाथ सुन्न हो गये। अक्ले ज़वाब दे गयी। जल प्रवाह है कि उमंदा चला आ रहा है। अहमद रज़ा का व्यक्तित्व ऐसा जाज्वलयमान है कि देश विदेश के अनवेषक (मुहाक्किक) बराबर आकर्षित हो रहे हैं। कुछ विश्वविद्यालयों में काम हो चुका है और कुछ में काम हो रहा है, उदारहणस्वरुप लन्दन युनिव्हरसिटी, लीडस युनिव्हरसिटी, केलीफोर्निया युनिव्हरसिटी, अज़हर युनिव्हरसिटी, जबलपूर युनिव्हरसिटी, मुस्लिम युनिव्हरसिटी, पंजाब युनिव्हरसिटी वगैरह। तहकीकी (विषणात्मक) काम के अतिरिक्त अहमद रज़ा के जीवन और विचार धारा पर अब तक पाँच सौ से अधिक निबन्ध व गवेषणात्मक निबन्ध (तहकीकी मकाला) पत्र, पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुके हैं। यह आदाद र शुशार (लेखा) सिन्ध युनिव्हरसिटी की एक रिसर्च इस्कालर ने पुस्तक के रुप में इकट्ठा किए हैं जो निकट भविष्य में लाहोर से प्रकाशित हो जायेंगे। इन्शाअल्लाह तआला (अल्लाह तआला ने चाहा तो) अगर और तहकीक (खोज) की जाय तो निबन्ध व गवेषणात्मक निबन्ध की यह संख्या और बढ़ सकती हैं। वैसे इमाम अहमद रज़ा दिवस के अवसर पर हर साल कम से कम बीस - तीस निबन्ध व गणेषनात्मक निबंध की वृध्दी होती है।

(६ - ४)

जब अहमद रज़ा का देश-विदेश में चर्चा होने लगा, अनेवेषकों एवं बुध्दिजीवियों (दानिश्वरों) की तेरह वर्षीय कोशिश रंग लायी तो यह बात अहमद रज़ा के विरोधियों को न आयी वह फिक्र में पड़ गये, करें तो क्या करें ।(एक विद्वान ने यहाँ तक फरमाया कि अहमद रज़ा को हमतो दफन कर चुके थे फलाँ (उक्त) प्रोफेसर ने कब्र से निकाला है अब दोबारा दफन करने में अर्ध शताब्दी लगेगी ।) इन बातों से फिक्र व बेचैनी का अनुमान लगाया जा सकता है । चार व नाचार (अन्ततोगत्व) वही पुराना हरबा (रणनीति) याद आया और जिस तरह मकरुह (घृणित) परोपेगेंडे से साठ - सत्तर वर्ष पहले किरदार - कुशी (आचरण - हनन) की मुहिम (अभियान) चलायी थी, अब फिर वही मुहिम चलायी और एक दूर की कौड़ी निकाल कर लाये। इन्केशाफ (विवेचना) यह फरमाया कि अहमद रज़ा ने कुरआने करीम को उर्दू तर्जुमें (अनुवाद) में बहुत सी गलतीयाँ की हैं। अरबवासी जिनको उर्दू नहीं आती उनको विश्वास दिलाया गया कि ऐसा ही है। इन्केशाफ करने वाले भले मानुस मुसलमान मालूम होते थे। अरब वासियों को यक़ीन आ गया और कुछ अरब देशों में इस अनुवाद पर पाबन्दी लगा दी गयी। पाबन्दी लगते ही उसका प्रचार शुरु कर दिया और अहमद रज़ा के विरुध्द तरह तरह की मांगे होने लगी।

सोचने और ग़ौर करने की बात है सत्तर वर्ष हुए कि अहमद रज़ा ने यह अनुवाद पूर्ण किया और फिर मुरादाबाद से प्रकाशित हुआ। यह वह समय था जबकि जानीबैने मकातिनबे पक्ष में ऐसे ऐसे उल्मा मौजूद थे कि आजकल के मुखालिफ उल्मा उनका पासंग भी नहीं। उनमें किसी को अनुवाद में ग़लती नज़र नहीं आयी। मुखालिफीन (विरोधियों) को भी नुकता रखने की हिम्मत न हुई। यहां तक कि सत्तर साल का लम्बा ज़माना गुज़र गया। फिर पाकिस्तान में गये तीस वर्षों से लाखों की संख्या में यह अनुवाद छप कर प्रकाशित हो रहा है। आज तक किसी आलिम ने ग़लतियों को निशानदेही न की। लेकिन यह शोर व गोगां (कोलाहल) क्यों है? इस कोलाहल से एक लाभ तो यह है कि गये तेरह - चौदह वर्षों में अहमद रज़ा का जो नाम रौशन हुआ है उस पर खाक (धुल) पड़ जाएगी। यह तहक़ीक़ बाद में होती रहेगी, ग़लतियाँ हैं या नहीं। फिर यह मस्ला अहले इल्म (विद्वानों) का है, अवाम (जनसामान्य) को इससे कोई सरोकार नहीं। वह कुरआन से अगाद्य प्रेम रखते हैं निश्चय ही उस व्यक्ती से नफरत करने लगेंगे। जिसके सम्बन्ध में यह सुनेंगे कि उसने कुरआन के अनुवाद में ग़लतियाँ की हैं। विरोधियों ने परोपेगेंडे के लिए यह भ्रमस्पर्शी पहलू तलाश किया है और यह काम राजनैतिक सूझ - बूझ रखने वाले का ही हो सकता है।

अगर अहमद रज़ा का व्यक्तित्व पहले की भाँति गोपनीय होता तो सम्भवतः इस रणनीति से ज़्यादा सफलता हो सकती लेकिन जब उनके व्यक्तित्व का हर पहलू सामने आ गया है और लोगों को मालूम हो गया है कि इल्म व कज्ल में वह अद्वितिय रोज़गार थे तो यह राजनितिक वहीं सफल हो सकता है जहाँ अहमद रज़ा का परिचय नहीं। सोचने की बात है जो क़ुरआन का माहिर विभिन्न विद्याओं में निपुण और अरबी ज़बान का ऐसा माहिर हो जिसकी अरबी दानी की खुद अरबवासियों ने सराहना की हो और उर्दू ज़बान में वह कमाल पैदा किया हो कि उर्दू के बड़े बड़े कवि, साहित्यकार उनका गुणगान कहते हों क्या वह क़ुरआने करीम के अनुवाद में ग़लती का दोषी होगा? अगर उन्होंने ग़लती की है तो फिर किसी बी उर्दू अनुवादक के सम्बन्ध में नहीं कहा जा सकता कि वह ग़लतीयों से रहित हैं क्योंकि विदूता और पाण्डित्व में उर्दू के सारे अनुवादक से वह श्रेष्ठ है और निष्ठा व तक़वा में सर्वश्रेष्ठ।

(६ - ५)

इस प्रोपेगेंडे से एक उद्देश तो अहमद रज़ा को बदनाम करना है। दूसरा बड़ा उद्देश्य यह है कि व्यापारिक स्तर पर अहमद रज़ा के अनुवाद की निकाली रोकी जाय। गये कुछ वर्षों में अहमद रज़ा के मानने वाले एशिया, आफ्रिका, अमेरिका और यूरोप के विभिन्न देशों में फैल गये हैं। सब के सब माली तौर पर सुदृढ़ है और उर्दू लिखते - पढ़ते हैं, अहमद रज़ा के अनुवाद को पसन्द करते है और लाखों की संख्या में मंगाते हैं इससे विरोधियों के अनुवादों की निकाली प्रभावित हुई, स्पष्ट है एक व्यापारी यह कैसे पसन्द करेगा की दूसरे की गर्मबाज़ारी, उसकी सर्दबाज़ारी (मन्दे) का कारण हो। इसलिए तरकीब (उक्ति) यह सूझी कि इस्लामी देशों में इस अनुवाद पर पाबन्दी लगवाओ ताकि यह अनुवाद वहाँ न जा सके, फलतः लोग विरोधियों के अनुवाद पढ़ेंगे, इसके अतिरिक्त एक यह भी फायेदा होगा जबकि लोग प्रोपैगंड़े से प्रभावित होकर वह गुमान दोंगे जो न सिर्फ बल्कि अरब बल्कि दूसरे देशों और भारत - पाक में इस अनुवाद की नक्काली प्रभावित होगी, और धीरे धीरे उसको नज़रसे छुड़ा दिया जाएगा। लेकिन सुना यह है कि जब से पाबन्दी लगी है यह अनुवाद लाखों की संख्या में निकल रहा है, जोचा (मानो) -- *है इब्तदा हमारी तेरी इन्तेहा के बाद।*

बहरहाल लेखक के नज़र में विरोध की वजह इल्मी और मज़हबी नही बल्कि सरासर साम्प्रदायिक एवं व्यापारिक है। द्वेष एवं पक्षपात अच्छे अच्छो को मतान्ध कर देना है और उस निम्न सतह पर ले आती है जहाँ स्वयं पक्षपाती एवं

द्वेषी अपने आप को पाकर अपने ज़मीर (अन्तरात्मा) के सामने लज्जित होता है। अल्लाह तआला हम सबको नफ्स (इन्दिय) की शरारत से सुरक्षित रखे। आमीन (एबमस्ल)।

(६ - ६)

हमारे इतिहास का यह दुखःन्त है कि जिन्होंने दीन व मिसलत की निःस्वार्थ सेवा की वह यहां मंजर (बहिर्हष्य) में चले गये और जिन्होंने उनकी तुलना में साधारण सेवाएँ की अतिशयोक्ति से उनकी सेवाओं को राई का पहाड़ बनाकर दिखाया गया। पाठक अन्धे कुंएँ में वास्तविकता को ढूढ़ते ढ़ढ़ते थक गये। पता नहीं चलता। इतिहास - लेखक का यह घोर दुःखान्त है। पिछलों ने कुछ कवियों, कुछ गद्यकारों, कुछ आलिमों, कुछ क्रान्तिकारियों के नम दे दिए। वर्षों से यही चले आ रहे हैं। कोई पूछने वाला नहीं कि इनके अतिरिक्त भी कोई है? पूछना तो दूर निष्क्रियता का यह हाल है कि कोई लाया भी जाये, कोई दिखाया भी जाये तो देखते नहीं, नज़रें फेर लेते हैं, आँखों पर पट्टियाँ बाँध ली, कानों में रुई डूँस ली, कोई दिखाए तो क्या दिखाए और सुनाए तो क्या सुनाए?

सूफिया व उल्मा - ए - हक का विशाल वर्ग जिसने साहित्य, राजनिति और विद्या एवं बुद्धिमत्ता के क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान किया, उनका ज़िक्र तक नहीं। इतिहास एवं साहित्यिक पुस्तको में या तो उनका ज़िक्र ही नहीं और है तो सरसरी (संक्षिप्त)। इस वास्तविकता को पाकिस्तान के प्रख्यात इतिहासकार डा. इशतेयाक हुसेन कुरैशी ने महसूस किया और एक उल्मी मज़लिस (विद्यात्मक गाष्टी) में स्पष्ट रुप से व्यक्त किया और फरमाया अब मैं इस नतीज़े पर पहुँचा हूँ कि इतिहास में अब तक जो कुछ लिखा गया वह सब एकपक्षीय है। सम्भवतः उनका संकेत भारत व पाक इतिहास की तरफ था। अगर यह बयान सही है और कोई कारण नहीं जो उसकी सत्यता से इन्कार किया जाए तो हमको सम्पूर्ण इतिहास पर नज़र ड़ालनी होगी, विशेषकर भारत - पाक इतिहास और जो महत्वपूर्ण तत्व इतिहासकारों एवं अनवेषकों ने छोड़ दिया है या उनसे छूटा है उसको इतिहास में शामिल करना होगा।

इतिहासकार की दृष्टि सम्पूर्ण दिशाओं में होनी चाहिए। वह सालिल पर पड़े हुए धोंधों से सरोकार नहीं रखता, दरिया की अथाह गहराई में गोता लगाकर अमूल्य मोती निकालता है। मगर कुछ इतिहासकारों ने घोंगों को मोती समझ कर इतिहास को सजाया। वास्तविकता से मुँह मोड़ा। अब वास्तविकता एवं प्रमाण एवेय निकले चले आते हैं। इतिहासकार एवं अंतवेशक हैरान हैं, शर्मिन्दा हैं कि हमने क्या

किया। इतिहास को क्या से क्या बना दिया। जब सूर्य उदय होने लगा अन्धकार हटने लगी, प्रकाश फैलने लगी तो अन्धकार प्रेमी परेशान होने लगे। सम्पूर्ण विश्व जगमगा रहा है। हर ज़बान पर 'नूरुन अला नूर' (प्रकाश पर प्रकाश) है। मगर वह जिन्होंने अन्धकार से दोस्ती की ठानी हैं इन्कार पर इन्कार किए जाते है और आरोप पर आरोप लगाए जाते हैं। नये नये आरोप नये नये तुहमत, जो न उठाए जाये न रखे जाये। अल्लाह आज्ञानता के बाज़ार में इल्म व हदिस निलाम हो रहे हैं। बोलीयों पर बोलियां लग रही हैं। *इन्ना लिल्लाहे व इन्ना एलैहे राजेअन* (निसन्देह हम अल्लाह के है और उसी की तरफ हमें पलटना है)।

(६ - ७)

मगर मानने वाले मान रहे हैं, स्विकार करने वाले स्विकार कर रहे हैं। निसन्देह अहमद रज़ा हूज़ूर सल्लल्लाहो अलैहे वसल्लम का महान मोजज़ा (चमत्कार) थे। उल्माए हरमैन ने सच कहा *"जब उनकी याद आती है, मुहम्मद सल्लल्लाहो अलैहे वसल्लम की याद आती है"*। निसन्देह अहमद रज़ा फनफिर्रिसूल (रसूल के प्रेम मे विलीन) थे। सबने जाना है। सबने स्विकार किया हैं। विरोधियों ने भी, समर्थकों ने भी। तो फिर बताओ आशिके रसूल गलत रास्ते पर कैसे चल सकता है ? उसके मानने वाले उसके रास्ते पर चलने वाले गलत कार्य नहीं हो सकते। गुमराह नहीं हो सकते।

(६ - ८)

भारत - पाक के मुसलमान गरीबों, मिस्कीनों की अकसरियत उनकी मानने वाली है और हमारे देश में गरीब ही अकसरियत (बहुसंख्यंकता) में हैं। हूज़ूर सल्लल्लाहो अलैहे वसल्लम ने फरमाया था, "मैंने जन्नत का मुआईना किया तो जन्नत वालों में सब से ज्यादा गरीबों और निर्धनों को ही पाया"। तो इस्लाम को गरीबोंमें तलाश किजिए, मिस्कीनों में तलाश किजिए। वह गरीब, वह मिस्कीनें जो दीन के नाम पर दिमागों को नही उज़ाड़ते, जो दीन के नाम पर दिलों को वीरान नहीं करते, जो दीन के नाम पर मुसलमानों का रक्तपात नहीं करते, जो दीन के नाम पर हुकूमत का लालच नहीं रखते। जो जान व माल कुर्बान करने में कभी हिचकिचाते नहीं। दर्शक (तमाशायी) बने खड़े नहीं रहते। आतिश - नगरुद (नगरुद - अग्नि) में कूद जाते हैं। ज़माने ने उन्हें आज़माया है। हमने बी देखा है। आपने भी देखा है। अहमद रज़ा ने अपने अकीदतमन्दों और मानने वालों में इस्लाम के लिए बलिदान एवं समर्पण की ऐसी रुह फूंकी कि जब वक्त ने आज़माया था, ज़ान हथेलियों पर रखे चले आए। अहमद रज़ा ने मुस्लीम समाज में एक इन्कलाब बरसा बरदा किया। दिलों को गर्माया, रहों को तड़पा और भविष्य में आनेवाले इस्लामी इन्कलाबियों का मार्ग प्रशस्त किया।

ज़िन्दाबाद ऐ अहमद रज़ा ज़िन्दाबाद !

एदारा अफकारे हक़ की मतबुआत

१)	रुपये कमाने का जायेज़ तरीका	अज़	ईमाम अहमद रज़ा	(उर्दू)
२)	दोनों हाथ से मुसाफहा	"	"	"
३)	शहनशाह कौन ?	"	"	"
४)	मज़ारात पर औरतों की हाज़री	"	"	"
५)	माहे कामील	"	"	"
६)	जिसमे - बे - साया	"	"	"
७)	हुक़ुक़ुल इबाद की अहमीयत	"	"	"
८)	अहकामे तस्वीर	"	"	"
९)	क्रान्सी नोट के मसाइल	"	"	"
१०)	निशाने हक़ व बातिल	"	"	"
११)	इमाम अहमद रज़ा और आलमी जामेआत	"	प्रो. मसऊद अहमद	"
१२)	ग़रीबों के ग़मख़ार	"	"	"
१३)	नेकियाँ करो । गुनाहों से बचो	"	अल्लामा मुस्तफा आज़मी	"
१४)	हयाते जावेदानी	"	अ. हक़ीम शर्फ क़ादरी	"
१५)	दर्से तौहिद	"	शफी अकाड़वी	"
१६)	तर्ज़े जिन्दगी	"	आफताब आलम मिस्बाही	"
१७)	वेहल हदीस	"	गुलाम जाबिर शम्स मिस्बाही	"
१८)	अक़ाईदे ओलमा ये दे व बन्द	"	हुज़ूर हाफ़ीजे मिल्लत	(हिन्दी)
१९)	नमाज़ का तरीक़ा	"	कारी इर्फानुल हक़	"
२०)	ईस्लाहुल अवाम	"	मुफ्ती रिज़वानुर्रहमान	"
२१)	उजाला	"	प्रो. मसऊद अहमद	"
२२)	ईमाम अहमद रज़ा - एक महान विद्वान	"	"	(अंग्रेजी)
२३)	गुनाहें - बेगुनाही	"	"	"
२४)	ईमाम अ. रज़ा - एक हमाजेहत शख़सियत	"	मौलाना कौसर नेयाज़ी	"
२५)	मोजेज़ाते नबी सल्लल्लाहो अलैहे वसल्लम	"	डा. आमीर जिलानी	"

एदारा - ए - अफकारे हक़ -- बायसी बाज़ार, पुर्णियाँ
बिहार (भारत) पिन. नं. ८५४ ३१५.

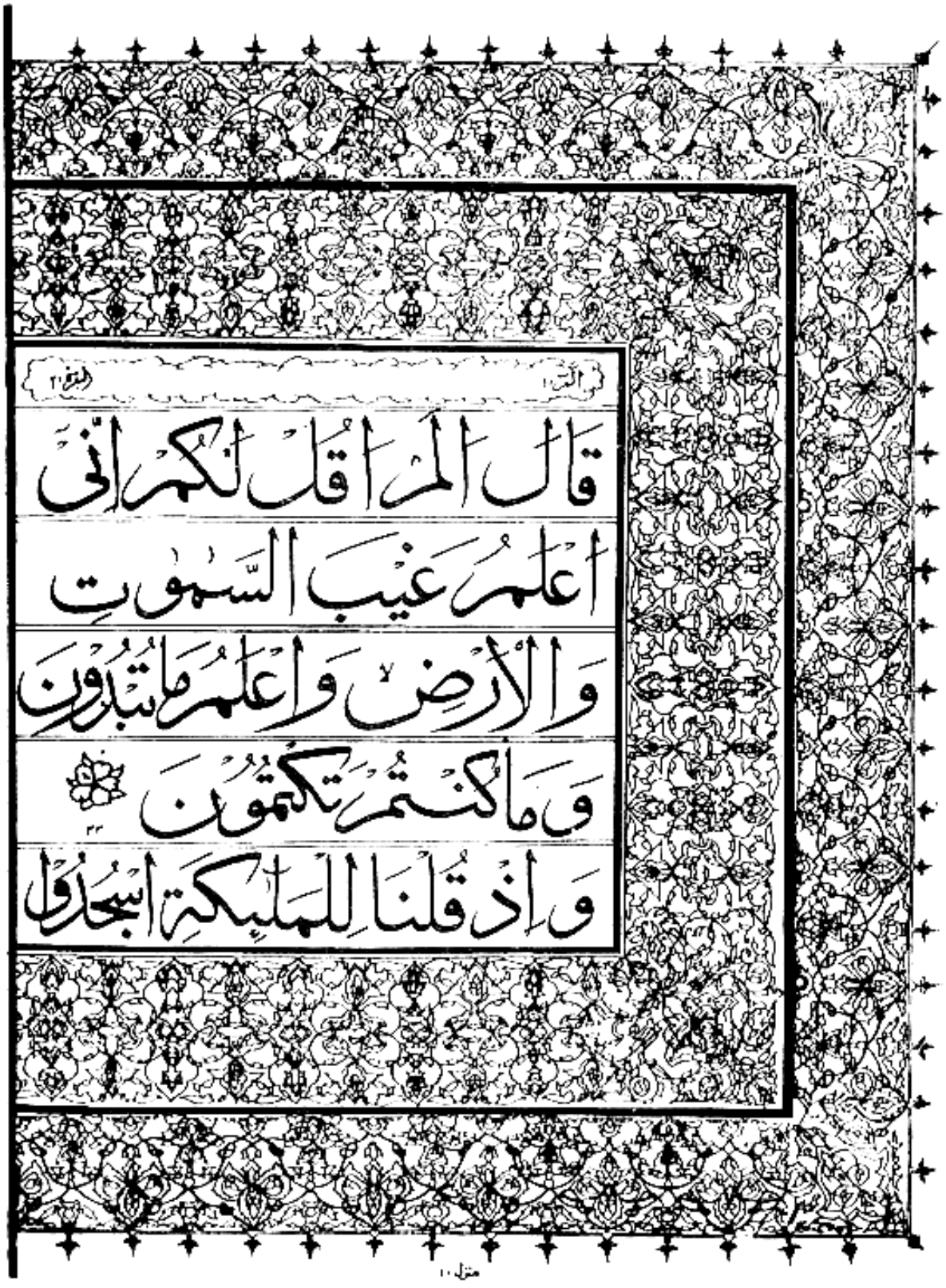
قَالَ اَلَمْ اَقُلْ لَّكُمْ اِنِّيْٓ
اَعْلَمُ غَيْبَ السَّمٰوٰتِ
وَالْاَرْضِ ۙ وَاَعْلَمُ مَا تُبْدُوْنَ
وَمَا كُنْتُمْ تَكْتُمُوْنَ ﴿٣٣﴾
وَاِذْ قُلْنَا لِلْمَلٰٓئِكَةِ اسْجُدُوْا

अजाइबुल कुर्आन, मकतूबा ख़ुर्शीद आलम,
गौहर रक़म, मतबूआ लाहौर

एदारा अफकारे हक़ की मतबुआत

१)	रुपये कमाने का जायेज़ तरीका	अज़	ईमाम अहमद रज़ा	(उर्दू)
२)	दोनों हाथ से मुसाफहा	"	"	"
३)	शहनशाह कौन ?	"	"	"
४)	मज़ारात पर औरतों की हाज़री	"	"	"
५)	माहे कामील	"	"	"
६)	जिसमे - बे - साया	"	"	"
७)	हुक़ुक़ुल इबाद की अहमीयत	"	"	"
८)	अहकामे तस्वीर	"	"	"
९)	क्रान्सी नोट के मसाइल	"	"	"
१०)	निशाने हक़ व बातिल	"	"	"
११)	इमाम अहमद रज़ा और आलमी जामेआत	"	प्रो. मसऊद अहमद	"
१२)	ग़रीबों के ग़मख़ार	"	"	"
१३)	नेकियाँ करो । गुनाहों से बचो	"	अल्लामा मुस्तफा आज़मी	"
१४)	हयाते जावेदानी	"	अ. हक़ीम शर्फ क़ादरी	"
१५)	दर्से तौहिद	"	शफी अकाड़वी	"
१६)	तर्ज़े जिन्दगी	"	आफताब आलम मिस्बाही	"
१७)	वेहल हदीस	"	गुलाम जाबिर शम्स मिस्बाही	"
१८)	अक़ाईदे ओलमा ये दे व बन्द	"	हुज़ूर हाफ़ीजे मिल्लत	(हिन्दी)
१९)	नमाज़ का तरीक़ा	"	कारी इर्फानुल हक़	"
२०)	ईस्लाहुल अवाम	"	मुफ्ती रिज़वानुर्रहमान	"
२१)	उजाला	"	प्रो. मसऊद अहमद	"
२२)	ईमाम अहमद रज़ा - एक महान विद्वान	"	"	(अंग्रेजी)
२३)	गुनाहें - बेगुनाही	"	"	"
२४)	ईमाम अ. रज़ा - एक हमाजेहत शख़सियत	"	मौलाना कौसर नेयाज़ी	"
२५)	मोजेज़ाते नबी सल्लल्लाहो अलैहे वसल्लम	"	डा. आमीर जिलानी	"

एदारा - ए - अफकारे हक़ -- बायसी बाज़ार, पुर्णियाँ
बिहार (भारत) पिन. नं. ८५४ ३१५.